Chapter-6

षष्ठ अध्याय

महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में वैयक्तिक संवेदनाएँ

षष्ठ अध्याय

महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में वैयक्तिक संवेदनाएँ

संवेदना :

साधारणतः संवेदना, शब्द का प्रयोग सहानुभूति के अर्थ में होने लगा है। मूलतः वेदना या संवेदना का अर्थ ज्ञान या ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव है। मनोविज्ञान में इसका यही अर्थ ग्रहण किया जाता है। उसके अनुसार संवेदना उत्तेजना के सम्बन्ध में देह-रचना की सर्वप्रथम सचेतन प्रति क्रिया है जिससे हमें वातावरण की ज्ञानोपलब्धि होती है। उदाहरण-हरीवस्तु, हरे रंग को देखने की संवेदना की उत्तेजनामात्र है। उत्तेजना का हमारे मनपर मस्तिष्क तथा नाड़ीतन्तुओं द्वारा प्रभाव पड़नेपर ही हमें उसकी संवेदना होती है। संवेदना हमारे मन की चेतना की वह कूटस्थ अवस्था है, जिसमें हमें विश्व की वस्तुविशेष बोध न होकर उसके गुणों का बोध होता है। प्रौढ़ व्यक्तियों में यह संवेदना प्रायः असम्भव हो जाती है। यद्यपि साधारणतः अंग्रेजी में इसे 'सिम्पैथी' या फेलोफीलिंग कह सकते हैं, किन्तु मनोविज्ञान में 'सेन्सेशन' के रूप में ही इसका विशिष्ट प्रयोग होता है। यह हमारी इच्छा पर निर्भर नहीं है। उदाहरणार्थ- मनोहारी संगीत सुनते ही हम अपना आकर्षन नहीं रोक सकते। संवेदना के लिए उत्तेजककी आवश्यकता है, जिससे सम्बन्धित गुण ही हममें संवेदना उत्पन्न करता है। इसे तीन वर्गोमें विभाजित किया गया है (1) विशिष्ट संवेदना (2) अन्तरावयव संवेदना, (3) स्नायविक संवेदना। इसमें विशिष्ट ज्ञानेन्द्रिय तथा बाहरी उत्तेजनाने द्वारा होनेवाली संवेदनाको विशिष्ट संवेदना अथवा 'इन्द्रियसंवेदना' कहते हैं। इस संवेदना की विशेषता यह है कि यह विशेष अवयव से सम्बन्ध रखती है और प्रत्येक ऐसी संवेदना दूसरी इन्द्रिय-संवेदना से पृथक की जा

सकती है। इसके कई भेद हैं, यथा–घ्राण, रस, त्वचा, दृष्टि तथा श्रोतृ–संवेदना। इन भेदों में भी मात्रा भेद होता है। इन्हीं संवेदनाओं के द्वारा हमें विश्व के विभिन्न पदार्थो का ज्ञान होता है। इसी प्रकार प्राणी के शरीर की आन्तरिक अवस्था के कारण उत्पन्न होनेवाली पाचन–क्रिया, रक्त–संचार और श्वास–प्रश्वास आदि के अवयवों से सम्बन्धित संवेदनाएँ मन्तरावराव संवेदना कहलाती हैं। यह प्रायः तीन भागों में विभाजित की जा सकती है– (1) जिसे हम शरीर के किसी भाग में निश्चित कर सकें, यह पेट आदि अवयव–विशेष की साधारण क्रिया से उत्पन्न होती है; (3) प्राणी की सामान्यवस्था में होनेवाली वे संवेदनाएँ, जिन्हें कही भी निश्चित न कर सकें, जैसे, भूख प्यास स्नायविक संवेदनाएँ ग्रन्थि तथा पेशी आदि के संचालन से उत्पन्न होती है।[1]

रचनाकार मूलत सामाजिक प्राणी होता है। वह अपने साहित्य में प्रकारान्तर से अपने जीवन अनुभवों की अभिव्यक्ति ही करता है। यानि जीवन को वह जिस रूप में देखता है, उसी की अभिव्यक्ति उसे साहित्य में होती है। जीवन और परिवेश का यह अन्तः साक्षात्कार कहीं न कहीं उसकी संवेदना से जुड़ा है।

महादेवी जी के गद्य साहित्य में संवेदना–पक्ष पर अध्ययन करना अनिवार्य है। साथ ही संवेदना–पक्ष पर विचार करने से पहले हमें यह भी जान लेना आवश्यक है कि वास्तव में संवेदना क्या है या संवेदना किसे कहते हैं।

'संवेदना' शब्द की व्यत्पत्ति

'संवेदना' शब्द की व्यत्पत्ति 'विदै' धातु में 'यु' प्रत्यय जोड़ने पर 'यु' के स्थान पर 'अन्' हो जाता है, इसके बाद 'ई' को गुणा करने से 'वेदन' शब्द की व्यत्पत्ति होती है। तदुपरान्त स्त्रीलिंग में 'टॉप' प्रत्यय जोड़ने पर 'वेदना' शब्द बनता है। 'वेदना' शब्द के पूर्व 'सम' उपसर्ग जोड़ने से 'संवेदना' शब्द की व्यत्पत्ति होती है।

'वेदना' शब्द का सामान्य अर्थ होता है – 'कष्ट', 'पीड़ा' या 'दुःख'। 'सम' शब्द का अर्थ होता है– 'समान'। अर्थात् 'सम' उपसर्ग के प्रयोग से 'वेदना' शब्द में अर्थ वैशिष्ट्य उत्पन्न हो जाता है और तब 'संवेदना' का अर्थ हो जाता है– 'समान वेदना' या 'समान दुःख' अथवा 'सहानुभूति'

वस्तुतः 'संवेदना' शब्द अपने प्रयोग और सन्दर्भ के अनुसार विभिन्न अर्थो का 'वाचक' है। अंग्रेजी में संवेदना के लिए (Sensation) सिम्पैथी (Sympathy) सैंसिटिविटी (Sensitivity), इनोटिविटी (Emotivity) आदि शब्दों का प्रयोग होता है।

'संवेदना' शब्द का अधिकांश प्रयोग मनोविज्ञान एवं साहित्य के अन्तर्गत किया जाता है। सम्पूर्ण मनोविज्ञान तथा साहित्य संवेदना पर ही आधृत कहा जाय तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। विद्वानों ने इसे निम्नांकित ढंग से परिभाषित किया है।

मनोविज्ञान कोश के अनुसार

''संवेदना चेतना की वह अवस्था, जो किसी एक इन्द्रिय के उत्तेजित होने पर उत्पन्न होती है और जिसका तात्विक विश्लेषण नहीं किया जा सकता।''

संवेदना की यह परिभाषा हमें पूरी तरह से सार्थक प्रतीत नहीं होती है, क्योंकि संवेदना केवल इन्द्रियों से उत्पन्न नहीं होती है। इसके अतिरिक्त और भी बहुत से तत्व हैं जो संवेदना को उत्पन्न करने में सहायक होते हैं।

प्रख्यात मनोवैज्ञानिक मरफी ने लिखा है – ''पर्यावरण के एकांश के प्रति प्रारम्भिक सजगता की योग्यता को संवेदना कहते हैं।'' इस परिभाषा में अस्पष्टता प्रतीत होती है। प्रारम्भिक सजगता की योग्यता ही संवेदना नहीं होती है।

एक अन्य मनोवैज्ञानिक कोश में लिखा है– ''इन्द्रिय ज्ञान का वह अन्तिम तथा अपरिवर्तनीय अंश जो उत्तेजना पर आश्रित होते हुए भी इन्द्रिय संग्राहक (ज्ञानेन्द्रिय यथा– नेत्रादि को प्रभावित करता है जो वास्तव में अमूर्तिकरण है, किन्तु सामान्यतः शरीर–विज्ञान व मनोभौतिकी में संवेदना की प्रतिक्रिया प्रारम्भिक अनुभव के रूप में वर्णित होती है।'' यहाँ पर संवेदना के मर्म को समझने की चेष्टा की गई है। काफी हद तक परिभाषा विचारणीय हो सकती है। किन्तु इसे सर्वश्रेष्ठ परिभाषा नहीं माना जा सकता है।

'साहित्य' में संवेदना को अलग ढंग से परिभाषित किया जाता है। साहित्य में उसका अर्थ–दुःख, अवसाद, पीड़ा एवं सहानुभूति से लिया जाता है। कुछ साहित्य समीक्षकों ने संवेदना को निम्नांकित ढंग से परिभाषित किया है।

डॉ. नागेन्द्र : ''मूलतः संवेदना का अर्थ है– ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त अनुभव अथवा ज्ञान, किन्तु आजकल सामान्यतः इस शब्द का प्रयोग इसके मूल अर्थ में ही किया जाता है और उस अर्थ में यह किसी बाह्य उत्तेजना के प्रति शरीरतन्त्र की सर्वप्रथम सचेतन प्रतिक्रिया होती है– साहित्य में इसका प्रयोग स्नायविक संवेदनाओं की अपेक्षा मनोगत संवेदनाओं के लिए ही अधिक होता है। इस प्रकार साहित्यिक सन्दर्भ में संवेदनशीलता मन की प्रतिक्रिया की शक्ति ही है, जिसके द्वारा संवेदनाशील व्यक्ति दूसरे किसी व्यक्ति के सुख–दुःख को समझकर उससे अपना तादात्म्य स्थापित कर लेता है।''

आपने संवेदना को पूर्ण बुद्धिमत्ता एवं व्यापकता के साथ परिभाषित किया है। इसमें उन्होंने संवेदना के प्रायः सभी घटकों तथा प्रभावक तत्वों पर दृष्टिपात किया है।

डॉ. आनन्द प्रकाश दीक्षित : ''संवेदना उत्तेजना के सन्बन्ध में देह–रचना की सर्वप्रथम संचेतना प्रतिक्रिया है, जिसमें हमें वातावरण की ज्ञानोपलब्धि होती है।'' प्रस्तुत परिभाषा में अव्याप्ति दोष दृष्टिगत होता है। इसमें संवेदना के प्रायः सभी उपांगों पर विचार नहीं

किया गया है।

डॉ. देवी प्रसाद गुप्त : ''संवेदना का अभिप्राय अभाव की स्थिति या वेदना की निवृत्ति से न लेकर साहित्यकार की चेतनानुभूति की उस मनोदशा (अवस्था) से लेना चाहिए जो उसे सृजन की प्रेरणा निर्माण की शक्ति, रचना-विधान की क्षमता और लोक जीवन के प्रति आस्था प्रदान करती है।'' आपने संवेदना की की संक्षेप में उचित ढंग से परिभाषित करने का पूरा प्रयास किया है, किन्तु वे वास्तविक अर्थ की तह को छू पाने में असमर्थ रहे हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त विवरण से 'संवेदना' का मनोवैज्ञानिक एवं साहित्यगत दोनों अर्थ अलग-अलग व्याख्यायिक करने का प्रयास किया गया है।[2]

महादेवी की वैयक्तिक संवेदना

महादेवी जी की वैयक्तिक संवेदना यर्थाथता को धारण किये है। उन्होंने अपनी संवेदना को जीवन के विविध प्रकरणों में छण-छण जीया है।

महादेवी जी का बचपन समकालीन बालिकाओं से कुछ भिन्न रहा है सायद उसका कारण उनकी वैयक्ति संवेदना ही है। ''बाल्य अवस्था में गृह पढ़ाई के प्रथम दिन ही पढ़ाई करते समय'' आपने अध्यापक से छुट्टी की माँग पेश की आवश्यकता पूछने पर उत्तर दिया- 'फूल तोड लाँऊ नही तो माली तोड़कर बाबू (पिताजी) के गुलदस्तें में लगा देगा, जहाँ वो सूख जाते हैं, तो क्या तुम्हारे तोड़ने से नहीं सुखते?' 'सुखते तो है पर भगवान जी पर चढ़ने के बाद'[3] बालिका महादेवी जी ने ईमानदारी और सच्चाई के साथ अपनी संवेदना व्यक्त की है।

महादेवी जी की प्रथम काव्य रचना जो उन्होंने सात वर्ष की अवस्था में इस प्रकार लिखी थी-

'आओ प्यारे तारे आओं,
मेरे आँगन में बिछ जाओ,'[4]

बाल्य अवस्था में 'एक ऐसी घटना घटी जिसने महादेवी जी को इतना प्रभावित किया कि वे उस वेदना से कभी मुक्त नही हो सकीं। नौकर ने पत्नी को इना पीटा की वह लहू-लूहान होकर रोती हुई माँ के पास दौड़ आई अन्यथा वह उसे मार ही डालता। गर्भिणी स्त्री के लिए काम-काज भारी बोझ और उपर से ऐसी मार ! माँ ने सहानुभूति के साथ उसकी गाथा सुनी और नौकर को डाँटा-फटकारा। सब शान्त हो जाने पर महादेवी जी ने कहा - 'हाय कितना पीटा है! यह भी क्यों नहीं पीटती ?' माँ ने सहज भाव से कह दिया- 'आदमी मारे भी तो औरत कैसे हाथ उठा सकती?'

'और अगर तुमको इसी तरह बाबू मारे तो?' ना, ना बाबू ऐसा नहीं कर सकते आर्य समाजी होकर भी मेरे साथ सत्यनारायण की कथा सुनते हैं, बड़े अच्छे आदमी है। कोई-कोई आदमी दुष्ट होते हैं।' 'तो फिर इसने दुष्ट के साथ शादी क्यों की?' 'पगली शादी तो घर के बड़े-बूढ़े करते हैं, यह बेचारी क्या करें? अब कोई उपाय नहीं।'[5]

यह बालिका की जागरुक दृष्टि ही तो है, तभी तो उस अबोध बालिका के मन में एक असहाय अबला नारी के प्रति संवेदना छलक उठी।

महादेवी की साहनुभूति विश्वव्यापी हो गई है। वह एक पेड़ को एक स्थान से उखाड़कर दूसरे स्थान पर इसलिए नहीं लगातीं कि वह सूख न जाये। वे फूल इसलिए नहीं तोड़ती कि वह मुरझा न जाये। वे किसी भी जीव की मृत्यु, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, अपनी आँखों से देखना नहीं चाहतीं। मुझें याद है एक बार एक बार जब मेरे एक साथी महोदय ने एक कालीन पर चढ़े आते हुए चींटे को अँगीली से दूर फेंक दिया तो ये उसके मरजाने के डर से घबरा उठीं और दूसरी बार जब एक बार उनकी बिल्ली सुनयना ने इनकी आँख के सामने एक जानवर की हत्या कर डाली तो इनकी आंकों में आंसू झलक आये और कहने लगीं कि ''अब इस बिल्लीको अपने यहाँ नहीं रक्खूंगी'' तब से पता नहीं सुनयना कहाँ चली गई, मैंने उसे नहीं देखा।

विश्व के किसी कोने से किसी की भी पीड़ा की कहानी सुनकर इनका मन उसकी पीरा में डूब जाता है। अपने द्वारा यह किसी को पीड़ा पहुँचना भी नहीं चाहतीं, इसीलिए वह कभी भी आदमी से खींची जानेवाली रिक्शा में नहीं बैठती।[6]

महादेवी जी को बच्चों से बहुत प्यार है। दो-चार बच्चे हँसते-खेलते, सगड़ते देखकर वे रास्ते में भी कुछ देर के लिए अवश्य-विलम जाती है। उनका कहा है - कि बच्चों के प्रसन्न होने, रूठने और हँसने-रोने के कारण इतने सहज-सरल और क्षणिक होते हैं कि उनका क्षण-क्षण का भाव परिवर्तन देखना बहुत अच्छा लगता है। इनकी सतत् परिवर्तनशील भाव भंगिमा अनायास ही जीवन के गहनतम रहस्य का पता दे जाती है। अभी 'कुट्टी और अभी मिल्ली' की निश्चल नाट्कीयता से बड़ा और नाटक क्या होगा? इनकी चमकती जिज्ञासु छोटी गोल आँखें और इनके तोतले प्रश्नों की अबोध गतिशीलता अद्‌भूत होती है। इनकी लुका-छिपी का खेल-छिपने और प्रकट होने की क्रीड़ा-भगवान की लीला का आनंद देने के साथ-साथ कलात्मक अभिव्यक्ति का भी संकेत कर जाती है।

बच्चों की दावत और उन्हें खिलाने का आनन्द लेना उनके स्वभाव का आवश्यक एवं अनिवार्य अंग है। अस्वस्थ होने पर बच्चों की भीड़ और उनका कलह-कोलाहल उनके लिए महोषधि का कार्य करता है। वें मानती हैं कि बच्चे फूल से भी अधिक सुन्दर

होते हैं, क्योंकि वे बोलते हुए फूल है।[7]

बच्चों के क्रिया–कलाप को देख महादेवी जी की वैयक्तिक संवेदना अभिव्यक्त हुई है। सायद ही किसी लेखक कि संवेदना इस अवस्था को निहारने तक पहोच सकती है। संवेदनात्मकता :– उन्होंने अपनी गहरी संवेदना का परिचय दिया है। उन्होंने लिखा है – ''ऐसी कुछ क्षणों की भेंट में भी एक दृश्य की अनेक आवृतियाँ होती ही रहती थी। वे अपने थैले से दो चमकीली चूड़ियाँ निकालकर हँसती हुई सखी सुभद्राकुमारी से पूछती हैं – पसन्द है ? मैंने दो तुम्हारे लिये व दो अपने लिए खरीदी थीं। तुम पहनने में तोड़ डालोगी। लाओ अपना हाथ, मैं पहना देती हूँ। पहन लेने पर वे बच्चों के समान प्रसन्न हो उठतीं।''

इसी प्रकार पन्त जी की कोमलता एवं सुकुमारिता का वर्णन करती हुई उनके संघर्षो का जब लेखिका वर्णन करती है तब पाठक की संवेदना जाग्रत हो उठती है। यह चित्रण इस संवेदना को परखने के लिए पर्याप्त है– ''आर्थिक दृष्टि से सम्पन्नता की ऊची सीढ़ी से विपन्नता की अन्तिम सीढ़ि तक उन्होंने अनेक उतार–चढ़ाव देखे हैं। जिस अल्मोड़े में उनके मकान थे, वही किराये की छोटी कोटेज में रहते हुए भी न उनकी हँसी मलिन हुई और न अभिमान आहत हुआ वे किसी वीतराग दार्शनिक की तटस्थता की साधना नहीं कर रहे थे वरन उनकी स्थिति उस बालक से समानता रखती थी जो अपने घरोंदे को बनाने में जितना आनन्द पाता है, मिटाने में उससे कम नहीं।'' इन पक्तियों के पढ़ने के बाद पाठक पन्तजी के प्रति अधिक संवेदनशील हो उठते हैं। उनके बालक जैसे स्वभाव पर वह रीझ जाता है। घरौंदे बनाने की बात कहकर महादेवी ने पाठक को अपनी सारी संवेदनाएँ उडेल देने को विवश कर दिया है। पन्त जी की तरह प्रसाद के जीवन की संख्या बेला का मार्मिक चित्रण देखखर हृदय द्रवीभूत हो जाता है और गहरी संवेदना में डूब जाता है।[8]

महादेवी की एक प्रदर्शिनी 1940 में प्रयाग के एनीबिसेन्ट हाल में हुई थी जिसकी संयोजिका 'त्रिपुरा' की महारानी थी. उन्होंने भी अपने चित्रों को प्रदर्शिनी में रखाथा।

इसके पश्चात 1943 में बंगाल में भीषण अकाल पड़ा। कई लाख व्यक्ति कलकत्ते की सड़कों पर भूखे मर गये। उनके शव गिद्ध, सीयार और भेड़िये खा रहे थे। सारे देश में बंगाल का प्रश्न बड़ा ही गंभीर था। बंगाल के विषय में कोई स्वतंत्र भाषण नहीं कर सकता था। इस अवसर पर महादेवी ने कई तरह के तैलाचित्र बनाये जिनकी प्रदर्शिनी महिला विद्यापीठ में की गई। इस अवसर पर 'बंगदर्शन' नाम की एक पुस्तिका प्रकाशित की गई जिसमें महादेवी जी के दो तैलचित्र तथा अन्य लोगों के चित्र भी सम्मिलित थे। बंगदर्शन केवल चित्रों की पुस्तिका ही नहीं थी, उसमें कुछ कवियों की

कविताएँ भी बंगाल की भूखमरी के संबन्ध में प्रकाशित हुई थीं। महादेवी की भूवंदना भी प्रकाशित हुई थी। उस पत्रिका की बिक्री हाथों हाथ हुई तथा जो धनराशि एकत्र हुई वह महादेवी ने 'सरोजिनी नायडू' के पास भिजवा दी।[9]

चित्रकला के माध्यम से महादेवी ने पीड़ितों के प्रति संवेदना, सहानुभूति व्यक्त किया है। महादेवी जी के हृदय में समस्त राष्ट्रीय के प्रति सेवा की भावना रही है। इसे नकारा नहीं जा सकता।

एक दिन नौकर ने बहुत से अखबार इनके सामने लाकर डाल दिए थे और पंजाब के हृदय विदारक हिन्दू-मुस्लिम हत्याकाण्ड के समाचार पढ़कर इनके नेत्र सजल हो आए।[10]

महादेवी जी का कथन - ''अब मेरा परमधाम जाने का समय आ गया है। अब मैं जीना नहीं चाहती। जब केवल तन अस्वस्थ होता था, तब जीने की चाह बनी रहती थी। अब मेरा मन भी अस्वस्थ हो चला है - देश की वर्तमान स्थिति को देख-देख कर, देखो, आज ही के अखबार के मुखपृष्ठ में टोकरियों में धरे सैकड़ों बमों के चित्र छपे है। पहले मैं उन्हे लड्डू समझ बैठी थी। ये बम किन पर चलेंगे, निर्दोषों और गरीबों पर ही तो ! आदमी आदमी को मार रहा है, बचाने वाले अब नहीं रह गया कि इस सब के विरोध में सक्रिय रूप से कुछ कर सकूँ, तुम लोग कुछ करते नहीं, क्या हो गया है।''

ये पीड़ा-भरे वाक्य महादेवी जी ने मुझसे (विष्णुकान्त. शास्त्री) से 6 अगस्त 1986 को कहे थे।[11]

इस तरह महादेवी जी ने मानवतावादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए वैयक्तिक स्वार्थ के प्रति अपनी वैयक्तित्व संवेदनाएँ तथा चिन्तन को व्यक्त करते हुये लोकहित की कामना की है।

महादेवी के गद्य साहित्य में वैयक्तिक संवेदनाएँ

भारतीय साहित्य का जन्म ही करुणा से हुआ और संस्कृति के विकास का मूल मंत्र ही संवेदना है। फिर साहित्य और संस्कृति की जीती जागती प्रतिमूर्ति महादेवी जी संवेदना को अपने जीवन का आदर्श कैसे न मानती? अखिल भारतीय लेखिका-सम्मेलन में अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहाः - एक्स फल साहित्यकार के लिये यह आवश्यक है कि वह संवेदना को अपनी साहित्य साधना का मूलाधार बनाये। संवेदना जितनी गहरी होगी लेखन उतना ही सशक्त होगा। मानवता की एक सूत्र में बाँधने का एक मात्र साधन है संवेदना। एक संवेदनशील साहित्यकार को अपनी आत्मघाती प्रवृत्ति को रोकना होगा। अपनी पीड़ा न देखकर जग की पीड़ा देखनी होगी। एक व्यापक

दृष्टिकोण अपनाना होगा तभी वह अपने उद्देश्य में सफल हो सकेगा।[12]

प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी छायावादी काव्यधारा के चार आधार स्तंभ माने गये हैं, उनमें से महादेवी वर्मा एक सबल-सुदृढ़ एवं सर्वाधिक उर्जस्वित स्तंभ हैं। काव्य के क्षेत्र में मूलतः भावना, प्रेम और पीड़ा की गायिका होने के कराण उन्हें ''आधुनिक मीरा'' के नाम से भी अडिबित किया जाता है। जो करुणा उनके काव्य में प्राणवान है वही करुणा गद्य साहित्य का उत्स है। में इन के गद्य में भी वही मानवता और संवेदना अनवरत प्रवाहित होती रही है।[13]

महादेवी के गद्य में मानवीय संवेदना का 'अतीत के चलचित्र' 'स्मृति की रेखायें', में हुआ है। दोनो कृतियों में समाज के निम्न-वर्ग के पात्रों की असमर्थ कठिनाइयों को व्यक्त किया है।

महादेवी के गद्य साहित्य में मानवीय संवेदनाओं का वह रूप मिलता है, जो 1930 ई. के बाद प्रेमचन्द्र, निराला, वृन्दावनलाल वर्मा, बेनपुरी, आदि की कृतियों में उभर रही थी। गाँव के गरीब किसानों के घर, झोपडे, बरतन-बासन, गहने, कपड़े-लत्ते, मेहनत-मशक्कत और अभावों पर दृष्टि डालकर उन्होंने तत्कालीन नवीदित यथार्तवाद सौन्दर्य-दृष्टि का परिचय दिया। घीसा, बिबया मुन्नू का भाई, धनियाँ, जंगिया, कुलीभाई आदि के रेखाचित्रों में उसी दृष्टि के संकेत मिलते हैं। धरती की धूल से लिपटे इस सौन्दर्य में जनसाधारण की श्रमशीलता का तत्व प्रमुख है जन-जीवन की झाँकी प्रस्तुत करने की तत्कालीन स्चनात्मक प्रवृत्ति के बहाव के साथ ही महादेवी ने भी गाँव के परिवेश और लोगों के रहन-सहन का रेखांकन किया। गंगापार झूंसी के खण्डहर और आस-पास के गाँवों का चित्र कितना यथार्थ है- ''दूर पास बसे हुए, गुड़ियों के बड़े-बड़े धरौदो का समान लगने वाले लिये-पुते, कुछ जीर्ण-शीर्ण घरों से स्त्रियों का झुण्ड पीतल-ताँबे के चमचमाते मिट्टी के नये लाल पुराने भदरंग घड़े लेकर गंगाजल भरने आता है उसे मैं पहचान गयी हूँ। उनमें कोई बूटेदार लाल, कोई कुछ सफेद और कोई मैल और सूत में अद्वेत स्थापित करनेवाली कोई कुछ नयी और कोई छेदों से चलनी बनी हुयी धोती पहने रहती है।''[14]

समय और परिस्थिति के अनुकूल इनके सभी पात्र अपनी सारी सजीवता के साथ जीवन-यात्रा के पथ पर चलते दिखाई देते हैं। अपने उद्देश्य विषय की प्रेरणा से लेखिका उनके मार्ग में कोई बाधा नहीं उपस्थित करती। उसके पास किसी सिद्धांत का नहीं, वरन, मनुष्यता का मापदण्ड है। पीड़ितों के प्रति ममता, उपेक्षितों के प्रति उदारता, शोषितों के प्रति सहानुभूमि, मानवीय दुर्बलताओं के प्रति सुझाव वो साक्ष-क्षमा आदि के अनुपम साम्मिश्रण से संवेदनशील संस्स्मणात्मक चित्रण उभारे गए है। इनमें अनुभव समय

की विस्तृत व्याधा से सित्ता होकर सामने आते हैं। इसलिए अधिक कोमल, मधुर और मर्मस्पर्शी बन गए हैं।[15]

मानवीय संवेदना :

महादेवी जी के गद्य–साहित्य में मानवीय संवेदनाओं का उत्कृष्ट रूप देखा जा सकता है।

मानवीय संवेदना की अभिव्यक्ति की दृष्टि से 'आती के चलचित्र संग्रह' का रामा, 'विधावा भाभी'. 'अभागिन बिन्दा', 'घीसा' और 'स्मृति की रेखाएँ' संग्रह की सेविका 'भक्तिन', 'चीनी फेरीवाला', 'जग बहादुर', 'गुंगिया' आदि पात्र उल्लेखनीय है।

उनके गद्य–साहित्य में मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति की दृष्टि से 'रामा' नामक रेखाचित्र उल्लेखनीय है। रामा विमाता द्वारा प्रताड़ित होकर बुन्देलखंड से इंदोर जा पहुँचा था। बालक रामा को महादेवी जी की माता द्वारा आश्रय प्राप्त होता है। निःसहाय, निरीह बालक के जीवन परिवर्तन में महादेवी जी की माता एवं घर के समस्त सदस्यों को सहानुभूमि पूर्ण व्यवहार ही, आजीवन एक घरेलु सदस्यों की तरह रामा को रोके रहता है। और रामा की अपने सेवाभाव से घर के समस्त सदस्यों के हृदय में विशेष स्थान प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार मानवीय संवेदना भूखे, निःसहाय बालक के जीवन परिवर्तन में किस प्रकार सहायक सिद्ध हो सकता है यह महादेवी जी के बाल्यावस्था में घटित घटना प्रसंग के आधार पर देखा जा सकता है।

महादेवी जी 'भाभी' रेखाचित्र में भारतीय विधवा नारी की ओर सहानुभूति प्रकट करती प्रतीत होती है। भारतीय समाज की अव्यवस्था, सामाजिक–रचना के परिणाम ही विधवा नारियों की दुर्दशा होती है इसका यथार्थ चित्रण 'विधवा भाभी' है। महादवी जी के परिचय में आयी भाभी विवाह के साल भर में ही विधवा के नाम से कलंकित हो जाती है। परिवार के लोग भाभी को कुल विनाशिनी सिद्ध करते हैं। एक समय भोजन करना, दुर्बल शरीर होन के पश्चात भी घर के कामों में व्यस्त रहना। बाहर के लोगों से कोई संपर्क न रखना अन्यथा ससुर, ननंद की मार खाना अनेक प्रकार के कष्ट सहकर जीवन व्यतीत करती थी। विधवा भाभी के कष्टमय –जीवन को देधककर बालिका महादेवी जी का उनके प्रति लगाव एंव सहानुभूति बन रहेती। एक दिन बालिका महादेवी जी अपने हाथों से काढ़ी ओढ़नी पर फूल वही ओढ़नी विधवा भाभी को सर पर ओढ़ा दी थी। बालिका इस बात से अन्जान थी की विधवा भाभी को रंगीन वस्त्र वर्जीत थे। परिणाम ससुर, ननंद की मार से विधवा भाभी मुर्छित हो गयी यह देखकर महादेवी जी बचाने का प्रयत्न करती है परन्तु भाभी तन से ही नहीं मन से भी मुर्छित हो गयी।

''महादेवी जी लिखती है – उस एक घटना से बालिका प्रौढ़ हो गयी थी और युवती वृद्धा''।[16]

आगे लिखती है – ''उस 17 वर्ष की युवती की दयनीयता आज समझ पाती हूँ, जिसके जीवन के सुनहरे स्वप्न गुड़ियों के घरौंदे के समान दुर्दिन की वर्षा में केवल बह ही नही गये, वरन, उसे इतना एकाकी छोड़ गये कि उन स्वप्नों की कथा कहना भी सम्भव न हो सका।''[17]

इसी प्रकार एक और उदाहरण 'बिन्दा' नामक रेखाचित्र का है। बाल्यावस्था में ही महादेवी जी का परिचय एक बिन्दा नामक बालिका से हुआ था। सौतेली माँ के अत्याचार के कारण वह अपनी उम्र से कम दिखाई देती थी। उसकी सौतेली माँ कभी किसी बात पर रुष्ट होने के कारण उसे गर्मियों की जलती दोपहर में आंगन के फर्श पर घण्टों खड़े रहने को विवश कर देती, कभी भूखा रखती, तो कभी अपने ही पुत्रको गर्मी से बचाने के लिए घण्टों बिन्दा से उस पर पंखा झलवाया करती। बालिका का कोई अपराध हो या न हो फिर भी उस पर झूठे लांछन लगाकर मनमाने अत्याचार करती। इस प्रकार बालिका बिन्दा के दुःखमयी जीवन को देख महादेवी जी हर–समय विचलित होती रहती। एक दिन दुर्भाग्यवश बिन्दा का पाँव खौलते दूध से जल गया विमाता के क्रोध से भयभीत होकर वह महादेवी जी के पास आकर छुप जाती है। बालिका बिन्दा अपने जले हुए पैरों के दर्द से अधिक सौतेली माँ की मार से भयभीत थी। महादेवी जी की माता ''बिन्दा के पैरों पर तिल का तेल और चूने का पानी लगाकर, उसे घर भेज देती है। घर पहोचते ही बिन्दा के ऊपर जो बीती उसका वर्णन महादेवी जी स्वयं करने में असमर्थ रही। एक दिन बिन्दा चेचक रोग से ग्रसित हो जाती है तब माता द्वारा रोकने के उपरांत भी महादेवी जी उसे मिलने घर चली जाती हैं तथा उसे देख अत्यंत दुःखी होती है। फिर एक दिन बिन्दा की मृत्यु का समाचार सुन महादेवी दुःखी होकर बिन्दा को उसकी आकाश–वासिनी अम्मा जो चमकीले तारों के पास थी उन्हीं तारों में बिन्दा को भी महादेवी जी ढूँढ़ने लगी।''

बालिका महादेवी जी जो दुःखी–जनों के दुख को बाँटने एवं सहयोग करने के प्रयत्न में संलग्न रहती। यह महादेवी जी का अनन्य स्नेह एवं संवेदनशील हृदय ही तो है।

महादेवी जी का बालकों के प्रति मानवतावादी प्रेम व्यक्त करता हुआ उनका 'घीसा' नामक रेखाचित्र देखा जा सकता है। विधवा माँ का एकमात्र पुत्र घीसा महादेवी जी की पाठशाला का विद्यार्थी था। शिक्षा की ओर उसकी मेहनत और लगन को देख महादेवी जी को कई बार ऐसी इच्छी होती कि बालक घीसा के व्यक्तित्व के समुचित विकास हेतु उसे अपने पास रखलें किन्तु निरीह माता की एक मात्र सन्तान को उससे दूर रखना

उचित नहीं लगता था। घीसा दो सप्ताह से ज्वर में पड़ा था। दवा महादेवी जी भिजवा देती थी, परंतु देख-भाल कोई करने वाला न था। दो चार दिन उसकी माँ बैठी, फिरभोजन का प्रबन्ध करने हेतु उसे बालक घीसा को छोड़कर काम खोजने जाना पड़ता। महादेवी जी उसे इतवार की साँझ को देखने जाती है परंतु घीसा स्वंय गिरते-पड़ते महादेवी जी को मिलने आ पहोचता है यह देख महादेवी जी का मन उस बालक के प्रति उद्विग्न हो उठा इस प्रकार मानवीय संवेदना निर्धन बालक के लिए किस प्रकार सहयोगी सिद्ध हो सकी है।

स्मृति की रेखाएँ संग्रह की 'भक्तिन' रेखाचित्र में भक्तिन महादेवी जी की सेविका है गाँव से आई हुई उस झूसी से जहाँ का निवासी घीसा था। वह सेविका भी अजीब सेविका है। उसकी अपनी कहानी है। इस रेखाचित्र के पूर्वार्द्ध में लेकिन उत्तरार्ध में वह महादेवी जी की परिचारिका पद से गृहस्वामिनी पद तक पहुँची दिखायी गई है। महादेवी जी लिखती है- 'भक्तिन और मेरे बीच में सेवक स्वामी का सम्बन्ध है, यह कहना कठिन है, क्योंकि ऐसा कोई स्वामी नहीं हो सकता, जो इच्छा होने पर भी सेवक को अपनी सेवा से हटा न सके और ऐसा कोई सेवक नहीं सुना गया जो स्वामी से चले जाने का आदेश पाकर अवज्ञा से हँस दे। भक्तिन का स्वतन्त्र व्यक्तित्व अपने विकास के परिचय के लिये ही मेरे जीवन को घेरे हुये हैं। भक्तिन की कहानी अधूरी है पर उसे खोकर मैं इसे पूरा करना नहीं चाहती हूँ।'[18]

भक्तिन की सेवा-भक्ति के कारण महादेवी का हृदय संवेदनशील हो उठा है।

'चीन फेरीवाला' रेखाचित्र में मानवीय संवेदना का अत्यन्त करुण चित्र प्रस्तुत है। चीनी फेरीवाला बाल्यावस्था में रात्रि के समय अपनी बहन के गोद में सिर रखकर अपनी भूख भुलाता। विमाता के अत्याचार के कारण बहन को वैश्या-वृत्ति करने लिए मजबूर किया। एक दिन बहन सदैव के लिए घर छोड़कर चली जाती है। बहन की खोज में बालक चीनी मारा-मारा फिरता है। युवा अवस्था में कपड़ों की फेरी लगा कर इमानदारी की रोटी खाता। चीनी कपड़े की फेरी लगाता हुआ महादेवी जी के यहाँ जाया करता वह महादेवी से भाई-बहन का रिश्ता स्थापित करता है। एक दिन जब चीनी जनमुक्ति सेना के आह्वान पर अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए स्वदेश लौटना चाहता है तब महादेवी जी चीनी देशभक्ति देख उसके फेरी के सारे कपड़े खरीदकर उसकी सहायता करती है तथा उसे स्वदेश लौटते हुए देख उसकी देश-भक्ति से प्रभावित हो जाती है। इस प्रकार मानवीय संवेदना देश की रक्षा के लिए महत्वपूर्ण कार्य कर सकती है।

'जंग बहादुर' रेखाचित्र में बद्रीनाथ जाते समय जंग बहादुर और धनसिंह नामक कुलियों के कष्टमयी जीवन के वर्णन द्वारा महादेवी जी ने उत्पीड़ित वर्ग की ओर अपनी

सहानुभूति व्यक्त कि है। जंगबहादुर और धनसिंह के प्रसंग में एक ओर डांडी में बैठकर ऊँघती जाती सम्पन्न घर की महिलाएँ हैं या कम से कम मज़दूरी देकर अधिक से अधिक यात्रा करने वाले यात्रा के दौरान कुली के बीमार होने या मर जाने पर उसे वहीं और वैसी ही अवस्था में छोड़कर दूसरा कुली कर लिया जाता है। इस निर्मम शोषक वर्ग के चरित्र पर लेखिका ने व्यंग्य किया है। महादेवी जी को मिले कुलियों में धनसिंह मार्ग में ही बीमार हो जाता है। घाटे की चिन्ता छोड़कर भाई जंगबहादुर उसकी देखभाल हेतु दूसरा कुली करके स्वयं वहीं रुकना चाहता है। वहाँ आर्थिक हानि की चिन्ता से धनसिंह भी बुखार में बोझा उठाने लगा। महादेवी जी भली-भाँती उनकी मज़बूरी एवं परिस्थिति को जान जाती है। और वह वहीं रुककर धनसिंह को औषधी देकर उसे स्वस्थ करने में सहायक होती है और दूसरे दिन यात्रा आरम्भ करती है। इस प्रकार लेखिका ने उत्पीड़ित वर्ग की सहृदयता और ममता की मिसाल के तौर पर धनसिंह और जंगबहादुर का प्रेमभाव दिखाया है। साथ ही पहाड़ी कुलियों के कष्टमयी जीवन की ओर महादेवी जी ने मानवीय प्रेम की अभिव्यक्ति किया है।

मानवीय संवेदना की अभिव्यक्ति की दृष्टि से महादेवी जी का 'गुंगिया' नामक रेखाचित्र उल्लेखनीय है। पति द्वारा व्यक्ता गुंगिया का जब एक मात्र पुत्र हुलासी उससे बिछड़ जाता है तब उसे पुनः मिलाने के प्रयत्न में महादेवी जी की सामान्य मनुष्य के प्रति लगाव एवं मानवीय संवेदना महत्वपूर्ण कार्य करती है। पुत्र-वियोग से दुःखी गुंगिया जो बातचीत करने में असमर्थ थी, एक दिन महादेवी जी के पास पत्र लिखवाने आ जाती है। वहीं वे उनके परिचय में आती है। कलकत्ते भागा हुआ हुलासी का पता आदि शेष न होने पर महादेवी जी कलकत्ते रहनेवाली अपनी सहपाठिनी को गुंगिया की सम्पूर्ण व्यथा लिखकर हुलासी को खोज निकालने का काम सौंपती है। वहाँ कलकत्ते में महादेवी जी की सहपाठिनी की गुंगिया को आश्वासन देने के उद्देश्य से अपने ही नौकर को हुलासी के रूप में बातकर पत्र के साथ-साथ कुछ रुपये भिजवाती है। इस प्रकार पुत्र-वियोग में दुःखी स्त्री के दुःख को कम करने में महादेवी जी को सहानुभूतिपूर्ण कृत्य और सौहदार्यपूर्ण व्यवहार उनके मानवीय संवेदना एवं मानवीयता का परिचायक है।[19]

अतः यू कहाँ जा सकता है कि महादेवी जी ने अपनी लेखनी के आधार से निम्नवर्गीय पात्रों की चारित्रिक दृढ़ता से पाठकों का परिचय कराया है। गाँव में व्याप्त अज्ञान अंधविश्वास, निरक्षरता, स्वार्थ वैमनस्य आदि में फँसे और पले इन पात्रों को उबारने का महत्त पूर्ण कार्य किया है। महादेवी जी ने अपने जीवन में आनेवाले उन उपेक्षित चरित्रों को अपनाया है जिनमें भारतीय समाज की ज्वलन्त समस्या है और इन समस्याओं के निराकरण में उनकी मानवीय संवेदना का उत्कृष्ट रूप दृष्टिगत होता है।

महादेवी के रेखाचित्रों में मानव हृदय को छूने वाले वर्णन अर्थात मानव मन की संवेदना को जगा सकने वाले चित्रण अधिक सफल है।

पशु–पक्षी संवेदना

लता, पादप, पुष्प आदि तक उनकी पारिवारिक ममता के समान अधिकारी है। साथ ही गाय हिरण, कुत्ता, बिल्लियाँ, गिलहरी, खरगोश, मोर, कबूतर आदि उनके चिरसंगी हैं। उन्होंने स्वयं लिखा हैं, ''स्मृति यात्रा में पशु पक्षी ही मेरे प्रथम संगी रहे हैं, किन्तु इसे दुर्यो ही कहा जाएगा कि मनुष्य ने उनसे वह प्राथमिकता, अनायास छीन ली।'' आगे चलकर इन पर ही यथार्थ रेखाचित्र लिखे जो 'मेरा परिवार' शीर्षक से प्रकाशित हुए।[20]

महादेवी जी बाल्यावस्था में जब प्रयाग आई तब क्रास्थवेट विद्यालय की छठें कक्षा की छात्रा थी। वे एक पेड़ की डाल पर बैठकर लिखा करती थी। वह बगीचा एक खटिक का था। वही वह बहुत सी मुर्गिया पालता था। महादेवी जी का कथन है – ''मुर्गी के बच्चे मुझको बहुत अच्छे लगते थे वे फूल जैसे होते हैं। उन्हें मैं रोज गिन लेती थी, तब बैठकर कविता लिखती थी। एक दिन उसमें एक बच्चा गायब था। मैने उस खटिक से पूछा तो उसने बताया, एक हमारी नयी टीचर आई थीं, ले गई।'' मैंने कहा, 'उतने छोटे बच्चे को कैसे पालेंगी?।' वह हँसने लगा, कहा, 'पालेंगी नहीं, खाएँगी।' अब तो मैंने कविता–पुस्तिका और सब समेट कर रख दिया और जाकर अपने कमरे में लेटकर रोना शुरु किया ! जब मैं खाने नहीं गयी तो मैट्रन आई। उन्होंने पूछा, 'क्या बात है?' उनको बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा, 'ये बात है?' वे उस टीचर के पास गयीं। उसने कहा, उस समय तक मुर्गी का बच्चा मारा–वारा नहीं गया था। डलिया के नीचे ढँका था। उन्होंने कहा, 'महादेवी जी खाना नहीं खा रही हैं, रो रही हैं। आप इनको न मारिए, दे दीजिए।' उन्होंने दे दिया। उसको ले जाकर मैने रक्खा और तब उसके बाद मेरे मन में आया कि सब की पहचान रखनी चाहिए, नहीं तो कोई और उठा ले जायेगा। तब मैंने लिखा, उसके चोंच पीले रंग के पंजे ऐसे और पंख इतने–इतने निकले हैं और ऐसी है, उसका नाम मूंगा है। ये मेरी पहली संस्मरण की भूमिकायें है।[21]

महादेवी जी बाल्यवस्था से ही पशु–पक्षी के प्रति अति संवेदनशील रही है। यही कराण कि पशु–पक्षी महादेवी के परिवारिक सदस्य की तरह रहे है।

मेरा परिवार :– इस संस्मरण संग्रह में पशु–पक्षियों से सम्बन्धित सात संस्करण हैं। नीलकण्ठ, गिल्लू, सोना, दुर्मुख, गौरा, नीलू, निक्की, रोजी और रानी ये सभी पशु–पक्षी मिलकर लेखिका के परिवार का निर्माण करते हैं। 'स्मृति–यात्रा में पशु–पक्षी ही मेरे प्रथम संगी रहे हैं। इसीलिए इनके अव्यक्त, करुण, उपेक्षित जीवन–इतिहास को रूपायित किया गया है। महादेवी की सबसे बड़ी विशेषता इस संस्मरण–संग्रह में यह है कि उन्होंने पशु–

पक्षियों की साधारण क्रियाओं को साहित्यिक रूप प्रदान किया है। उनकी सूक्ष्म संवेदना ने उन पशु–पक्षीओं के जीवन को छूकर, स्पर्श कर अनुभव किया है । इसमें लेखिका की अप्रतिम प्रतिक्षा आभासित हो उठी है। जो क्षण महादेवी ने बाल्यकाल में जिए हैं, जिन पशु–पक्षियों के साथ उनका निकट का परिचय रहा है, लेखिका उन पशु–पक्षियों की छोटी से छोटी गतिविधि से भी परिचित है। महादेवी क़े शब्दों में – 'अतीत में मिले खोए व्यक्तियों या पशु–पक्षियों को स्मरण करते समय कभी–कभी मेरे इतने आंसू गिरे हैं कि लिखा हुआ कागज गीला हो जाने के कारण नष्ट हो गया है और कभी कभी हसी ने मुझे इतना अस्थिर कर दिया है कि लिखावट टेढ़ी–मेढ़ी हो गयी है। मेरे संस्मरणों में मेरे आंसू हँसी के ही नहीं, अनेक तीव्र आवेगों के गहरे चिह्न अलग–अलग पहचाने जा सकते हैं।'[22]

प्रयाग के पास का नखासकोना दंगा–फसाद और चिड़ियों के बाजार के लिए जाना जाता है। लेखिका कई बार नखासकोना जाती और पिंजरे में बंद खरगोश, मोर, चकोर आदि जीवो को मुक्त करवाती थीं। या किसी–किसी पिंजरे में पानी–दाना का अभाव हो तो रखवाती थी। कुछ चिड़ियों को खरीदकर ले आती और उड़ा देती थी।[23]

मेरा परिवार के सात संस्मरणों के अतिरिक्त 'आत्मिका' में कुक्कुट शावक के प्रति महादेव की सहानुभूति व्यक्त हुयी है। उस शावक की प्राण रक्षा के लिए व्यथित हो जाती है। और सुरक्षा के लिए उसे परिचय चिह्नों से शकायित किया गया और नाम दिया गया मूँगा। पहला संस्मरण नीलकण्ठ मोर से सम्बन्धित है। उसी बाजार में से महादेवी सहानुभूति वश दो मोर के बच्चे ले आयीं। मोर के बच्चे बड़े होने पर नीली गर्दन के कारण लेखिका ने मोर का नाम रखा 'निलकंठ' और मोर की छाया के समान उसके साथ रहती मोरनी का नाम 'राधा' रखा गया। 'नीलकंठ' में नेतृत्व, प्रेम, स्नेह सभी गुण हैं। उसमें जातिगत विशेषताओं के अतिरिक्त मानवीयता भी थी। नीलकंठ लेखिका के चिड़ियाघर का सेनापति और संरक्षक बन जाता है। उसका दन्ड विधान अद्‌भुत था। 'वह अपनी पेनी चोंच से कभी–कभी खरगोश के बच्चों का कर्णवेश संस्कार कर देता किन्तु उसका स्नेह भी निराला था। वह राधा के बिना प्रसन्न नहीं रह पाता।'

इस स्मृतिचित्र में महादेवी जी का पक्षी–प्रेम के साथ मोर–मोरनी के एक निष्ठ प्रेम को भी निरूपित करना भी था।

गिल्लू महादेवी का प्रख्यात स्मृतिचित्र है। महादेवी ने सिर्फ किसी किसी व्यक्ति विशेष के ही चित्र नहीं खीचे हैं, बल्कि उनकी आत्मीयता पशु पक्षी के प्रति भी झलकती है। गिल्लू में गिलहरी जैसे छोटे जीवों के साथ लेखिका किस प्रकार आत्मीयता से जुड़ती है, उसका परिचय हमें मिलता है। कौआ की चोंच से घायल गिलहरी के बच्चे को उठाकर

घर में ले आना, उसकी सेवा सुश्रुषा करना, उसकी मृत्यु पर शोख प्रकट करना–उनमें महादेवी का उसके प्रति मातृत्व प्रेम की झलक दिखाई देती है। लेखिका ने गिलहर का नाम रखा है गिल्लू। नाम भी कैसा जैसे कोई माता पिता अपने बच्चे को प्यार से बुलाये और बच्चा खुश हो जाये, वैसी ही बात इस स्मृतिचित्र में देखने को मिलती है। गिलहरी के बच्चे को लेखिका इतना चाहती है कि उनकी प्रत्येक क्रिया और गिल्लू दोनों एक सिक्के के दो पहलू हो जाते। महादेवी एक जगह पर लिखती है– 'भुख लगने पर चिक–चिक करके मानो वह मुझे सूचना देता और काजू या बिस्कुट मिल जाने पर उसी स्थिति में लिफाफे के बाहर वाले पंजों से पकड़कर उसे कुतरता रहता। 'गिल्लू' लेखिका के सा ही उनकी थाली में ही खाना खाता है। महादेवी ने लिखा है मेरे पास बहुत से पशु–पक्षी है, और उनका मुझसे लगाव भी कम नही है, परन्तु उनमें से किसी को मेरे साथ मेरी थाली में खाने की हिम्मत हुई है, ऐसा मुझे स्मरण नहीं आता।''

गिल्लू का भी लेखिका के प्रति उतना ही प्रेम है। एक बार लेखिका की मोटरकार से दूर्घटना हुई और वे अस्पताल में रही तब गिल्लू भी खाना नहीं खाता था। गिलहरियों के जीवन की अवधि दो साल से अधिक नहीं होती। यहाँ पर भी गिल्लू अविस्मरणीय तब बनता है, जब उसकी मृत्यु हो जाती है। वैसे भी कोई तभी स्मरणीय बनता है जब वह चल बसता है। आज इन्सान–इन्सान के बीच प्रेम संबंध जोड़ना दूर की बात है। इस संदर्भ में ऐसे स्मृतिचित्र हमें सुखद अनुभूति कराते हैं।[24]

तृतीय संस्मरण मृग–शिशु सोना का है। उसके स्निग्ध सुनहरे रंग के कारण सोना नाम दिया गया। कुछ दिन के बाद दूध पीकर भीगे चने खाकर कुछ देर चौकड़ी भरना छात्रावास के कमरों का निरीक्षण करना उसका दैनिक कार्यक्रम बन गया। घंटी बजेत ही वह प्रार्थना के मैदान में पहुँच जाती। उसकी दाम्पत्य लालसा की अभिव्यक्ति उसके संस्मरण में मानो जान फूंक देती है। पूर्ण यौवन सोना बसन्ती हवा बहने पर किसी की मूक प्रतीक्षा में अधिक मार्मिक बन जाती। लेखिका की बद्रीनाथ की यात्रा पर चले जाने से सोना को एकाकीपन और अधिक खला और एक दिन अपने बँधन की सीमा भूलकर उछलने से उसकी अंतिम सांस भी उछल गयी।[25]

महादेवी जी लिखती है– ''पशु–मनुष्य के निश्छल स्नेह से परिचित रहते हैं, उसकी ऊँची–नीची सामाजिक स्थितियों से नहीं। यह सत्य मुझे सोना से अनायास प्राप्त हो गया।''[26]

आज के इस वैज्ञानिक युग में हमें खोजना हैं स्वयं के अन्दर क्या हमारे भीतर निश्छल स्नेह है। किसी को देने के लिए?

गौरा महादेवी का एक और स्मरणीय स्मृतिचित्र है। बहन श्यामा के कहने पर

लेखिका एक गाय अपने घर ले आती है। जिस दिन गाय उनके घर पहुँचती है उस दिन लेखिका उसके गले में फूलो का हार पहनाती है, केसर का टीका करती है और चौमुखी दिया जलाकर आरती उतारती है। गौर अंगोवाली गाय का नाम भी कितना मनोहर रखा 'गौरा'–गौरांगिनी। नाम भी कितना मनोहर रखा गौरा के सौन्दर्य को लेखिका ने इस प्रकार उदघाटित किया है कि – ''गौरा वास्तव में बहुत प्रियदर्शन थी, विशेषतः उनकी काली बिल्लौरी आँखों का तरल सौन्दर्य तो दृष्टि को बाँधकर स्थिर कर देता था।''[27]

लेखिका गौरा से भी आत्मीयता से जुड़ जाती है और गौरा भी अपनी स्वामिनी की आहट तक को पहचानती गौरा भले ही न बोलती हो पर अपने अंगिक चेष्टाओं से अपना भाव प्रकट करती है। गौरा एक वर्ष बाद माता बनती है और एक पुत्र को जन्म दिया। गेरुवर्ण का होने से उसे लाल, मणि या लालू नाम दिया गया। दूध दोहन के समय 'परिवार' के सभी प्राणी पक्तिबद्ध हो खड़े रहते और दूध पीकर गौरा के चारों ओर उछ्लने–कूदने लगते घर में दुग्ध–महोत्सव शुरू होता है। तभी तीन चार मास के बाद गौरा उत्तरोत्तर शिथिल होने लगी। गौरा का शरीर शिथिल पड़ने लगता है। निरीक्षण–परीक्षण के बाद पता चला कि गाय को सूई खिला दी गई है। पशु चिकित्सक डॉक्टर जब गौरा को इन्जेक्शन देता है तो उसकी चुभन लेखिका को भी होती है। अक्सर ऐसा ही होता है कि जिसको हम ज्यादा चाहते है, वही हमसे जल्द दूर हो जाता है। मृत्यु संघर्ष करती गौरी एक दिन सुबह अपना मुँह स्वामिनी के कँधे पर रखकर इस संसार से सदा के लिए विदा ले लिया। गौरा की मृत्यु की घटना से महादेवी की वेदना बोल उठी है, यह कहना अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं होगा। मात्र गिल्लू ही नहीं गौरा भी महादेवी के जीवन का अभिन्न हिस्सा थी, ऐसा एहसास पाठको को जरूर होता है।

इस प्रकार 'मेरा परिवार' के संस्मरणों में महादेवी जी ने जीवन की विभिन्न स्थितियों को अपने सुख–दुःखात्मक अनुभूतियों को संवेदना के माध्यम से व्यक्त किया है।

'संभाषण' में संग्रहित विचारों को पढ़ने पर महादेवी की गहन संवेदना स्पष्ट हो जाती है। उन्ही के शब्दों में – ''संस्कारों में परिवर्तन लाने के लिए संवेदन ही एक मात्र अमोघ अस्त्र है, किन्तु इसका उपयोग वाणी ही कर सकती है। मैंने भी अपने प्रत्येक शब्द को गहन संवेदन में डुबो कर ही देने का प्रयत्न किया है।''[28]

महादेवी और युग बोध

आधुनिक समाज : महादेवी जी ने आज के समाज में व्याप्त असंतुलन एवं विसंगतियों की ओर संकेत किया है। उनके अनुसार हमारे जीवन मूल्यों का स्तर घटता जा रहा है हमारे आदर्श धीरे–धीरे लुप्त होते जा रहे है। हमारा समाज आज व्यक्तिगत स्वार्थो को अधिक महत्व देता है और हम अपनी शक्तियों को उपयोग सृजन के स्थान पर दूसरों

के विनाश के लिए अधिक कर रहे है। ऐसी स्थिति में समाज के नव निर्माण का मार्ग अवरुद्ध हो रहा है। हम अपने प्राचीन आदर्श भूल रहे है। जिसमें दूसरों को सुख देकर ही सबसे बड़े सुख का अनुभव किया है हम इस मान्यता को उपेक्षित कर रहे है।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर पीड़ा तम सम नहिं अधमाई।।

स्वयं इस व्यवस्था से दुःखी होकर वे कहती है – ''हमारी समाजिक परिस्थिति में अभी एक प्रतिक्रियातमक' ध्वंस युग ही चल रहा है। उसके सम्बन्ध में ऐसा कोई स्वस्थ और पूर्ण चित्र अंकित नही किया जा सका जिसे दृष्टि का केन्द्र बना कर निर्माण का क्रम आरम्भ किया जा सकता। इस दिशा में हम अपने व्यक्तिगत स्वार्थ और सुविधा के अनुसार ही तोड़ने फोड़ने का कार्य करते चलते हैं। अतः चट्टान पर सुनार की हथौड़ी का हल्का सा स्पर्श होता है और कही राख के ढेर पर लौहार के हथौड़े की गहरी चोट।'

महादेवी जी के अनुसार समाज की इन विसंगतियों का कारण है ''सामुहिक लक्ष्य के अभाव में व्यक्तिगत प्रयास।'' व्यक्ति अपनी सीमाओं में इतना अधिक बँधता जा रहा है कि समष्टि की ओर उसकी दृष्टि ही नहीं जा पाती तथा अपने शुद्र और संर्कीण अहं में वह अनेकानेक समस्याएं स्वतः उत्पन्न कर लेता है। वे समाज को संदेश देना चाहती है कि स्वयं मिटकर भी दूसरों को सुख प्रदान करना ही मानव की चरम उपलब्धि है। त्याग का सुख सबसे बड़ा सुख है। बौद्ध धर्म से प्रभावित होने के कारण वे मानती हैं कि व्यक्ति के मन से करुणा जैसी दिव्य अनुभूति मिटती जा रही हैं जिसके कारण वह विश्व के साथ तादाम्य नहीं स्थापित कर पा रहा है और अपने परिवेश को संकुचित कर समस्याओं को विकराल रूप देता जा रहा है उनके अनुसार घटा आकाश में होते हुए भी अपने को धरती के नवजीवन के लिए मिटा देती है –

सृष्टि का यह अमिट विधान,
एक मिटने में सौ वरदान।
नष्ट कब अणु का हुआ प्रयास
विफलता में है प्रगति विकास।
अमरता है जीवन का हास,
मृत्यु जीवन का चरम विकास।।

वे इस चेतना का विकास समाज में चाहती है, जिसमें व्यक्ति अपने को मिटाकर दूसरे के दुख का अनुभव करें। व्यक्तिगत हित के स्थान पर लोकहित को प्राथमिकता

देने वाला समाज वन्दनिय होता है किन्तु जब व्यक्ति अपने हित के लिए लोकहित को उपेक्षित कर देता है, वहीं मानो समाज को अराजकता और अव्यवस्था की ओर मोड़ देता है। उन्होंने एक दीपक की भांति जल कर सबको प्रकाश देने को ही जीवन का परम उद्देश्य स्वीकार किया है।

सब मुझे दीपक जाल लूँ
घिर रहा तम आज दीपक–रागिनी अपनी जगा लूँ
दीप मेरे जल अकपित
धुल अचंचल।
पथ न भूलें एक पग भी
घर न खोए लघु विहंग भी
स्निग्ध लौ की तूलिका से
आँक सबकी छाँह उज्ज्वल।।

महादेवी जी समाज में होने वाले परिवर्तन से संतुष्ट नहीं दीखती क्योंकि हम अपनी सभ्यता और संस्कृति को भूलते जा रहे हैं। वे मानती हैं कि किसी समाज का लौकिक व्यवहार ही उसकी संस्कृति और सभ्यता का प्रमाण है। किन्तु उन्हें दुख है कि विगत कुछ वर्षो से हमारे जीवन से संस्कार के बंधन टूटते जा रहे हैं यदि यही क्रम रहा तो आसन भविष्य में हमारे लिए संस्कृति पर अपना दावा सिद्ध करना कठिन हो जाएगा। हरे पत्ते और सजीव फूल वृक्ष से एक रसमयता में बंधे रहते है पर बिखरने वाली पंखुड़िया और झड़ने वाले पत्ते न वृक्ष के रस से रसमय रहते हैं न वृक्ष की जीवनी शक्ति से संतुलित। हमारे समाज के सम्बन्ध में भी आज यही सत्य होता जा रहा है।

इस प्रकार आधुनिक समाज के प्रति महादेवी जी पर्याप्त जागरूक रही हैं और उसकी परिस्थितियों का विश्लेषण करते हुए आदर्श समाज कैसा हो, इस पर भी प्रकाश डाला है।

पुरुष और नारी सम्बन्ध :-

समाज में नारी और पुरुष के सम्बन्ध को लेकर बहुत कुछ लिखा गया है। नारी की समाज में क्या स्थिति है इस पर भी बहुत लेखनी चलाई गई है। भारतीय संस्कृति के अनुसार यत्र नार्यस्त पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता।'' को ही आदर्श स्थिति मानते है। कहा जाता है कि जिस समाज में नारी की स्थिति जितनी ही सम्माननीय होती है वह समाज उतना ही विकसित होता है, अर्थात किसी भी समाज की प्रगति और दुर्गति का रहस्य उसके नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण में निहित है। नारी और पुरुष–समाज के दो चक्र

माने गए है और इनकी संतुलित गति ही समाज की स्थिति की परिचायक होती है। दूसरे शब्दों में कह सकते है कि नारी और पुरुष के परस्पर सम्बन्द ही समाज की आंतरिक व्यवस्था के सृजक होते है महादेवी जी के अनुसार नारी और पुरुष के परस्पर सम्बन्ध अभी उस रूप में विकसित नहीं हो सके हैं, जिस के फलस्वरूप समाज की व्यवस्था में कोई असंतुलन ही उत्पन्न न हो। इस क्षेत्र में नारी ने कहीं भी अपने कर्तव्य से च्युत होने की भूल नहीं की है। उनके अनुसार पुरुष ही नारी के प्रति अपने कर्तव्य से विमुख रहा है – ''आदिम काल से आज तक विकास पथ पर पुरुष का साथ देकर, उसकी यात्रा को सरल बनाकर, उसके अभिशापों को स्वयं झेल कर और अपने वरदानों से जीवन में अक्षय शक्ति भरकर मानवी ने जिस व्यक्तित्व चेतना और हृदय का विकास किया है, उसी का पर्याय नारी है।'' नारी को विधाता की कोमलता तथा सुन्दरतम सृष्टि कहा गया है। इस कृति का जिस समाज ने सम्मान किया वह स्वयं भी सम्मानित हुआ और जिस ने इसे उपेक्षित किया, वह स्वयं भी पतन के गर्त में गिरा। महादेवी जी का दृढ़ विश्वास है कि– 'किसी भी जीवित जाति ने उसके विविध रूपों और शक्तियों की अवमानना नहीं की परन्तु किसी मरणासन्न जाति ने अपनी मृत्यु को कम करने के लिए उसे मदिरा से अधिक महत्व नहीं दिया।'

यद्यपि आधुनिक समय में सामाजिक स्थिति में पर्याप्त परिवर्तन आया है स्पष्ट है कि नारी स्थिति में भी परिवर्तन हुआ है। उसे पहले से अधिक अधिकार प्राप्त हुए है। अपने भविष्य के बारे में भी निर्णय लेने में नारी सक्षम और स्वतन्त्र हो गई है। वह आज इतनी संज्ञाहीन और पंगु नहीं कि पुरुष अकेले ही उसके भविष्य और गति के सम्बन्ध में निश्चय कर ले। यह तो नारी की स्थिति का परिवर्तन है परन्तु महादेवी जी की दृष्टि में पुरुष को नारी के प्रति जितना उदार होना चाहिए, वह नहीं है। यद्यपि सम्पूर्ण विश्व के नारी समाज में कुछ चेतना आई है, परन्तु नारी की क्षमा उदारता और सहनशीलता का पुरुष दुरुपयोग ही करता रहा है, और नारी अपने इन्हीं गुणों के कारण छली जाती रही है। जीने की कला में महादेवी जी ने नारी की इसी सहिष्णुता के सीमा से अधिक हो जाने पर आक्रोष भी व्यक्त किया है। उनके अनुसार नारी यह नहीं जानती कि अपने इस गुण के कारण वह पुरुष के अन्याय को अनजाने ही बढ़ावा देती आई है और पुरुष उसके असाधारण धैर्य का अनुचित लाभ उठाता आया है। महादेवी जी के अनुसार पुरुष में आज भी संयम का अभाव है, और वह अपनी इस उच्शृंखल प्रवृत्ति को तुष्ट करने के लिए तथा नारी को उसका साधन बनाने के लिए नए–नए सिद्धांतों–नियमों की रचना करता आया है और नारी को उसी के आदर्शो में बाँध कर ठगता रहा है। उन्होंने पुरुषों की इस वृत्ति की आलोचना करते हुए कहा है– 'अनियंत्रित वासना का प्रदर्शन स्त्री के प्रति क्रूर ही नहीं जीवन के प्रति विश्वास घात भी है।'

आज जब नारी में चेतना आई तब उसके सामने यह भी प्रश्न है कि वह क्या करें? क्या पुरुष का साथ स्वीकार कर अन्याय सहने की अपनी नियति मान ले, या उसकी उपेक्षा कर स्वयं अपने मार्ग पर आगे बढ़ जाये परन्तु यह भी समस्या है कि पुरुष प्रधान समाज में अकेले संघर्ष कर पाने का साहस भी नारी को जुटाना होगा– 'यदि वह पुरुष की इस प्रवृत्ति को स्वीकृति देती है तो जीवन को बहुत पीछे लौटा ले जाकर ऐसे शमशान में छोड़ आती है और यदि उसे अस्वीकर करती है तो समाज को पीछे छोड़ शून्य में आगे बढ़ जाती है।

लेकिन वे स्त्री के लिए ऐसी परिस्थितियाँ चाहती है, जिसमें अपने उस गुरूत्तम उत्तर दायित्व के अनुरूप मानसिक तथा शारीरिक विकास के लिए विस्तृत स्वाधीनता मिल सके। यदि ऐसा वातावरण उसे नहीं मिल सका तो उसके चरित्र का स्वस्थ विकास सम्भव नहीं। उनके अनुसार–'स्त्री के व्यक्तित्व में कोमलता और सहानुभूति के साथ साहस तथा विवेक का एक ऐसा सामंजस्य होना आवश्यक है, जिससे हृदय के सहज स्नेह की अजस्त्र वर्षा करते हुए भी वह किसी अन्याय को प्रश्रय न देकर उसके प्रतिकार में तत्पर न रह सके। अपने व्यक्तित्व की और अपनी विशेषताओं की रक्षा न करते हुए यदि हमने अपनी रक्षा कर ली, यदि उन बन्धनों के साथ हमारे जीवन का आवश्यक अंश भी घिस गया तो हमारा एक बन्धन से मुक्ति पाकर दूसरे में बंध जाना अनिवार्य हो उठेगा।'

महादेवी जी ने मध्यम तथा निम्न वर्ग की स्त्रियों की स्थिति पर बहुत गम्भीरता से विचार किया है। ये स्त्रियाँ संसार की प्रगति में अनिभिज्ञ अनुभव शून्य तथा पिंजर बद्ध पक्षियों के समान जीवन व्यतीत करती है। वे यह सोच भी नहीं सकती कि इसके अतिरिक्त भी उनकी कोई दिनचर्या हो सकती है। यद्यपि समाज में स्त्री और पुरुष दोनों का ही स्थान महत्वपूर्ण है, परन्तु पुरुष स्त्री को हीन समझता है और समाज अपने एक अंग की अवहेलना कर क्या स्वस्थ और संतुलित रह सकेगा। 'पुरुष तथा स्त्री के कार्यक्षेत्र पृथक–पृथक से महत्वपूर्ण है। ऐसी दशा में यदि महत्वपूर्ण कर्तव्य का पालन करके भी स्त्री को पुरुष की दासता तथा पग–पग पर अपमान का कटु अनुभव करना होगा तो उसका अपने कार्यक्षेत्र को तिलांजलि दे देना स्वाभाविक है। नारी आज शिक्षित होकर अपने अधिकारों के बारे में विचार करने लगी है लेकिन उसका दृष्टिकोण है –

'हमें न किसी पर जय चाहिए न किसी से पराजय ; न किसी पर प्रभुता चाहिए, न किसी का प्रभुत्व। केवल वह अपना स्थान चाहिए वे स्वत्व चाहिए जिनका पुरुषों के निकट कोई उपयोग नहीं है, परनतु जिनके बिना हम समाज का उपयोगी अंग नहीं बन सकेगी।' और निश्चित ही हमारी मानसिक दासता के दूर होते ही न कोई वस्तु

हमारे लिए अलभ्य रहेगी न कोई अधिकार दुष्प्राप्य। कारण अपने स्वत्वों से परिचित व्यक्ति को उनसे वंचित रख सकना कठिन ही नहीं, असम्भव है।'

'हमारी दीर्घकालीन पराधीनता में भी नारी ने अपने स्वभाव गत गुण कम खोये है।..... पर दुर्बल पराजित पुरुष को अपने स्वत्व प्रदर्शन के लिए नारी के रूप में एक ऐसा जीव मिल गया, जिस पर वह विपक्ष से मिली पराजय की झुंझलाहट भी उतार सकता है और अपने स्वामित्व की साध भी पूरी कर सकता है, ऐसी स्थिति में भारतीय नारी के लिए पुरुष के निराश हृदय का विलास और निष्क्रिय जीवन का दम्भ दोनों का भार वहन करना स्वाभाविक हो गया, क्योंकि एक ने उसे कम मूल्य पर खरीदा और दूसरे ने उसके लिए ऊँचा से ऊँचा आदर्श उपस्थित किया।'

शिक्षा की स्थिति :-

भारत में अजा शिक्षा की स्थिति अत्यधिक दयनीय हो गई है। शिक्षा जो व्यक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है, उसके मन जगत को आलोकित कर व्यक्तित्व का बहुर्मुखी विकास करती है किन्तु आज यहाँ कि शिक्षा प्रणाली एक ऐसा अन्धकार बन गई है जिसमें भारत का भविष्य भटक रहा है। न ही कोई मार्ग दिखाई देता है न हीं कोई लक्ष्य। आज का युवा सुनियोजित शिक्षा प्रणाली के अभाव में लक्ष्य विहीन हो गया है। केवल नौकरी प्राप्त करना ही शिक्षा का उद्देश्य रह गया है। महादेवी जी के अनुसार युवा मन अनेक कल्पनाओं से सजे, ऊँचे-ऊँचे आदर्शों में विचरण करता है किन्तु जब यथार्थ का सामना करना पड़ता है तो सारे आदर्श धरे के धरे रह जाते हैं और व्यक्ति इस अर्थ प्रधान युग में नौकरी को पाने के लिए सब कुछ छोड़ देता है - ''छोटी से छोटी नौकरी रूपी अपवर्ग का साभास मिलते ही वह वेशभूषा से लेकर सिद्धांत तक इस तरह उतार फेंकता है, जैसे उनमें असाध्य रोग के कीटाणु भर गए हों। जिन्हें ऐसा उपवर्ग नहीं मिलता, वे या तो निराशा और कटुता के चारों ओर के वातावरण को विषाक्त करके नरक की सृष्टि करते रहते हैं, या आँख मूँद कर उच्छृंखल विकृतियों के चरचित्रों से काल्पनिक स्वर्ग रचे हैं।''

महादेवी जी युवा ता शिक्षित वर्ग की समस्या पर विचार करती हुई यह मानती है कि जीवन की जो इस समय व्यवस्था है, वह उनके लिए सुख साधनों को जुटा पाने में समर्थ नहीं है परन्तु वह यह भी असन्तोष व्यक्त करती है कि - 'यह सत्य है कि जीवन की वर्तमान व्यवस्था उन्हें सुख सुविधा के साधन नहीं देती पर दलितों और पीड़ितो के कन्धे से कन्धा मिला कर खड़े होने से कौन रोकता है? पर वे अपने जीने का महत्व जानते हैं, न मृत्यु की पीड़ा पहचानते हैं।'

वे इस स्थिति के लिए केवल छात्रों को ही उत्तरदायी नहीं ठहराती बल्कि शिक्षकों

को स्थिति का भी विश्लेषण करती है। उनके अनुसार आज का शिक्षक अपनी गुरुता को खोता जा रहा है क्योंकि उसका उद्देश्य विद्या अध्ययन या ज्ञान प्राप्त करना। प्रदान करना नहीं रह गया है, बल्कि अधिकाधिक धन प्राप्त करना ही उनका उद्देश्य है ताकि वे आधुनिक जीवन की सुख सुविधाएँ जुटा सकें। क्योंकि आज समाज में व्यक्ति के वैभव को देखकर उनके पाण्डित्य का निर्माण निर्णय किया जाता है– 'जीवन की आवश्यकता सुविधाएँ न पा सकने वाला स्वभाषा पण्डित अछूत की कोटि में रखा जा सकता है और आवश्यकता से अधिक सुविधा सम्पन्न विश्व विद्यालय का भाषा प्रोफेसर ब्रह्मतेज से युक्त ब्राह्मण का स्मरण दिलाता है।' शिक्षकों का आपसी संघर्ष और ईर्ष्या भी उनके मानसिक उथलेपन का परिचय देती है। उनका समय विद्यार्थियों के विकास में न लग कर अपने साथियों में संघर्ष करने में जाता है। शिक्षकों की इस गतिविधि पर आक्षेप करती हुई महादेवी जी कहती है – 'इन दोनों विषय वर्णों के बीच में एक द्रुलमुल स्थिति रखने वाले शिक्षक कभी एक की अवज्ञा, कभी दूसरे से ईर्ष्या का व्यवसाय करके अथवा वेतनवृद्धि के संघर्ष में विजयी या पराजित होकर जीते रहते हैं। ये विद्यालय व्यवसायी या तो इतने निश्चिंत है या इतने संघर्षलीन कि उन्हें अपने कर्तव्य की गुरुता पर विचार कर अपनी स्थिति से विद्रोह करने का अवकाश ही नहीं मिलता।[29]

आज अध्यापकों में भी आत्मविश्वास की कमी है। आज न अध्यापक यह विश्वास कर पाता है कि वह समाज का आवश्यक अंग है और न विद्यार्थी बिना इस आस्था के कष्ट–सहिष्णुता' उसके लिए एक प्रकार की यातना ही है।[30]

शिक्षकों की इस उदासीनता के कारण शिक्षित होने के बावजूद युवा निराश, हताश और लक्ष्यविहीन है। वे यद्यपि इसके लिए हमारी सम्पूर्ण व्यवस्था उत्तरदायी है परन्तु यदि आज का शिक्षक तटस्थ होकर केवल विद्याध्ययन की ओर अपना ध्यान केन्द्रित कर सके। खोखले वैभव के क्षुद्र घेरे से निकल आत्मा तेज को प्राधान्य प्रदान कर सके, अपनी व्यवसायिक बुद्धि को उदार दृष्टिकोण में बदल सके तो महादेवी जी के अनुसार 'एक नई पीढ़ी के भविष्य की रेखाएँ स्पष्ट और उज्ज्वल हो उठती।'

राष्ट्रीय चेतना के प्रसार तथा सांस्कृतिक पुर्नजागरण में भी शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण नहीं है। कारण यह है कि राजनीति से शिक्षा का कोई सम्बन्ध नहीं है, यह मुक्ति प्रशासन प्रदत्त है। किन्तु सामाजिक समस्याओं को सुलझाने का दायित्व तो इस वर्ग पर है, परन्तु इस दायित्व से वह स्वयं मुक्त हो गया है। वह केवल अपने बनाए हुए कल्पना के सीमित संसार में जीता है तथा उसमें किसी भी बाह्य समस्या का प्रवेश वर्जित है और इसी में वह संतुष्ट भी है। शिक्षा तो उसके लिए एक नीरस तथा उबाऊ दिनचर्या है। उसे केवल इस लिए विद्यालय जाना है कि वेतन प्राप्त होता है, बालकों

के भविष्य का निर्माण हो रहा है, या नहीं, इस चिन्ता से आज का शिक्षक मुक्त है। इस उदासीनता का परिणाम बताते हुए महादेवी जी लिखती है – 'जैसे हर टकसाल में एक प्रकार के सिक्के ढलते रहते हैं, उसी प्रकार हमारे शिक्षागृहों से एक ही प्रकार के लक्ष्यहीन हताश तथा कल्पनाजीवी विद्यार्थी निकलते रहेत हैं।'

शिक्षा के विकृत स्वरूप ने हमारी नैतिक तथा सामाजिक व्यवस्था को भी प्रभावित किया है। महादेवी जी ने उन व्यक्तियों के प्रति भी क्षोभ व्यक्त किया है जो वस्तुतः शिक्षित होकर देश को समाज को एक दिशा दे सकते थे परन्तु वे सर्वाधिक निष्क्रिय एवं उद्योग शून्य सिद्ध हुए। हमारी शिक्षा प्रणाली के प्रति असंतोष व्यक्त करते हुए वे लिखती है– ''शिक्षा द्वारा प्राप्त अनेक अभिशापों में एक मस्तिष्क की बेकारी भी है। सारी बुद्धि सारी क्रियात्मक शक्ति मानो पुस्तकों को कंठस्थ करने और समय पर लिख देने में ही केन्द्रित हो गई है। इसके उपरान्त प्रायः उन्हें बुद्धि और शक्ति के प्रयोग के लिये क्षेत्र नहीं मिलता और यदि मिला भी तो इतना संकीर्ण कि उससे दोनों ही पंगु बन कर रह जाते हैं।''

महादेवी जी शिक्षा के द्वारा व्यक्तित्व की संकीर्णता को दूर करने पर बल देती है यदि शिक्षित व्यक्ति स्वार्थ की सीमा पार न कर सका तो अशिक्षित और शिक्षित में क्या अन्तर होगा।[31]

छात्रों के मानसिक कवापद पर वे हँसती हैं और कहती हैं कि केवल तोते की तरह रंटत विद्या से इकना कल्याण नहीं किया जा सकता। लेकिन आज इसी बात की होड़ लगी रहती है कि किस विषय का कितना अंश कंठाग्र करा दिया जायं इसकी ओर तो ध्यान रहता है पर यह नहीं सोचा जाता कि किन परिस्थितियों में हृदयंगम किया जावे जिससे विद्यार्थी रजिस्टर मात्र न बन जावें। इसका परिणाम यह होता है कि जिस व्यावसायिक नियम से हम मंहगा प्रमाण–पत्र देने का व्यापार करते हैं उसी से खरीददार वैद्य–अवैद्य, उचित–अनुचित किसी भी साधन से सस्ता प्रमाणपत्र चाहता है। इससे बाधा डालने पर विद्यार्थीयों द्वारा शिक्षकों की हत्यायें भी हो चुकी हैं। मारपीट के समाचार तो नित्य मिलते रहते हैं।[32]

धर्म की स्थिति :-

आज धर्म की क्या स्थिति है? आज बुद्धिवाद ने धर्म के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। उसके सार्वजनिक तथा सर्वाभौतिक रूप में धर्म समाज के मार्ग दर्शन एवं सहज विकास में सफल भूमिका का निर्वाह कर पा रहा है या नहीं, यह प्रश्न धर्म की उपादेयता से सम्बन्धित है। इन सब प्रश्नों पर विचार करने पर महादेवी जी इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि आज धर्म की स्थिति भी संतोष जनक नहीं है। समाज और

धर्म में व्याप्त विकृतियों की ओर संकेत करती हुई महादेवी जी कहती है – 'एक चल नहीं सकता, एक वृत्त के भीतर वृत्त बनाता हुआ एक पैर से दौड़ लगा रहा है। गर्म और ठंडे जल से भरे पात्रों की निकटता जैसे उनका तापमान एक सा कर देती है उसी प्रकार हमारे धर्म और समाज की सापेक्ष स्थिति उन्हें एक सी निर्जीवता देनी रहती है। आज तो बाह्य और आंतरिक विकृति ने धर्म को ऐसी परिस्थिति में पहुँचा दिया है, जहाँ रूढ़िग्रस्त रहने का नाम निष्ठा और रीति कालीन प्रवृत्तियों की चंचल क्रीड़ा ही गतिशीलता है।'

धर्म को केवल आत्मा–परमात्मा और मोक्ष सृष्टि का विवेचन मान लेना उचित नहीं है। इसी कारण धर्म के विरुद्ध यह आरोप भी लगाया जाता है कि धर्म मनुष्य को भाग्यवादी, नियतिवादी तथा आलसी बना देता है। इन्हीं भ्रामक धारणाओं के कारण हमारे मन में आस्तिकता और आस्था विदा हो गई। साधारणतया धर्म का रूढ़ अर्थ ही आस्तिक मान लिया गया है। धर्म की जीवन के प्रति निवृत्ति वादी धारणा हमें जीवन से उदासीन कर देती है, साथ ही समाज के प्रति परमुखापेक्षी भी बनाती है। इस वृत्ति के कारण ही समाज का एक बड़ा अंग (साधु,सन्यासी, भिक्षु आदि) कोई कार्य नहीं करते और देश तथा समाज की कमजोरी का कारण बनते है। इसलिए जो धर्म समाज के एक बड़े वर्ग के लिए बैठे–बैठे भोजन जुटाए, जो वर्तमान से विमुख कर कल्पना के सागर में डुबोए रखे, जो निष्काम कर्म की आड़ में हमें निष्क्रिय बना दे, वह धर्म नहीं बल्कि अधर्म हैं। धर्म के इस स्वरूप में हमें कायर और अपंग बना दिया है, वस्तुतः धर्म का व्यर्थ है मानव का उन्नयन एवं विकास, परन्तु भ्रामक विवेचना के कारण धर्म का पतन हो रहा है और ईश्वर के प्रति अनास्था ने हमारे जीवन की प्रेरणाओं और आशाओं को ही समाप्त कर दिया है। उनके अनुसार केवल धर्म और ईश्वर को अस्वीकार. कर देना ही पर्याप्त नहीं, इसके स्थान पर इतना ही सुदृढ़ कोई दूसरा आधार भी होना चाहिए – अन्य व्यापक आदर्श की प्रतिष्ठा न होने के कारण यह अस्वीकृति एक उच्शृंखल विरोध प्रदर्शन मात्र रह गई। नास्तिकता उसी दशा में सृजनात्मक विकास दे सकती है जब ईश्वरता से अधिक सजीव और सामंजस्यपूर्ण आदर्श जीवन के साथ चलता रहे। जहाँ केवल अविश्वास ही उसका सम्बल है, वहाँ वह जीवन के प्रति भी अनास्था उत्पन्न किए बिना नहीं रहती। ओर जीवन के प्रति अविश्वासी व्यक्ति का सृजन के प्रति भी अनास्थावान हो जाना अनिवार्य है। ऐसी स्थिति का अन्तिम और असम्भावी परिणाम जीवन के प्रति व्यर्थता और निराशा की भावना ही होती है।

आधुनिक राजनीति :–

महादेवी जी के अनुसार 'युगों के उपरान्त हमारा देश एक राजनीतिक इकाई बना

सका है।' परन्तु आज राजनीतिक स्थिति धर्म की स्थिति से भी अधिक दयनीय तथा घातक है। किन्तु जिस प्रकार धर्म का अर्थ संकीर्ण और संकुचित होता जा रहा है, उसी प्रकार राजनीति भी सक्ति संचय के स्थान स्वार्थ के कारण शक्तियक्षय का निमित्त बनती जा रही है। 'धर्म ने यदि अपने आपको कूप के समान पत्थरों से बाँध लिया है तो राजनीति ने धरती के ढाल पर पड़े पानी के समान अनेक धाराओं में विभक्त होकर शक्ति को बिखरा डाला है।' बौद्धिक विकास के साथ-साथ इस युग में अनेक राजनीति विचार धाराओं का जन्म हुआ किन्तु ये विचार धाराएँ क्रमशः अनेक वादों एव पद्धतियों में विभक्त होती चली गई और धीरे-धीरे वह स्थिति आ गई कि हर व्यक्ति की अपनी अलग विचारधारा है और वह दूसरे के साथ कोई समझौता न करके अपने विचार सर्वश्रेष्ठ बताकर दूसरे पर थोपना चाहता है। इसी वैचारिक द्वन्द्व से धीरे-धीरे व्यक्ति व्यक्तिगत द्वन्द्व तक उतर आता है और जीवन में अनावश्यक द्वन्द्व और युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो जाती है - 'पुराना और स्वार्थी साम्राज्यवाद, नवीन पर क्रूर नास्तीजम और फाजिस्म, आध्यात्म प्रधान गाँधी वाद, जनसत्तात्मक, साम्यवाद, समाजवाद आदि सब रेल के तीसरें दर्जे के छोटे डब्बे में ठसाठस भरे उन यात्रियों जैसे ही रहे हैं, जो एक दूसरे के सिर पर सवार होकर ही खड़े रहने का अवकाश और लड़ने झगड़ने में ही मनोरंजन का साधन पा सकते हैं।..... एक की सीमाएँ स्पष्ट हुए बिना ही दूसरी अपने लिये स्थान बनाने लगती है और इसी प्रकार विश्व का राजनीतिक जीवन परस्पर विरोधिनी शक्तियों का मेला मात्र रह गया है।'

मुख्यत : हमारे यहाँ दो प्रमुख राजनीतिक विचार-धाराएँ हैं- गाँधीवाद एवं साम्यवाद महादेवी जी ने गाँधीवाद का समर्थन तो किया है क्योंकि स्वतन्त्रता संग्राम में वे गाँधी जी के साथ कार्य भी करती थी। उनका विचार था गाँधीवादी विचार धारा भारत के पूर्णतः अनुकूल है क्योंकि यह बाह्य दृष्टि में राष्ट्र का संयुक्त मोर्चा था तथा इसका दूरगामी या अप्रत्यक्ष प्रभाव भारतीय संस्कृति का पुनर्जागरण था. किन्तु महादेवी जी ने साम्यवाद को भारत के लिए अनुपयोगी माना है। वे मानती है कि यह दूसरे देश की विचार धारा है जो हमारी संस्कृति से मेल नहीं खाती बाहर से ओढ़ी हुई वस्तु लगती है, जब कि राजनीति विचारों का अपनी सभ्यता तथा संस्कृति से मेल खाना अति आवश्यक है। उनके शब्द में- 'उसकी स्थिति वैसी ही है जैसी पैराशूट से इस धरती पर उतर आने वाले रूसी की हो सकती थी जिसकी मित्रता में विश्वास करके भी हम जिसके इस देश सम्बन्धी ज्ञान में संदेह करेंगे जिसे अपनी संस्कृति और जीवन का मूल्य समझाने का प्रयास करेंगे और न समझने पर खीज उठेगे।'

आर्थिक स्थिति :-

'अर्थ सदा से शक्ति का अन्ध अनुगामी रहा है..... सारी राजनीतिक सामाजिक तथा अन्य व्यवस्थाओं की रूपरेखा शक्ति द्वारा ही निर्धारित होती रही और सबल की सुविधानुसार ही परिवर्तित और संशोधित होती गई, इसी से दुर्बल को वही स्वीकार करना पड़ा, जो सुगमता पूर्वक मिल गया। यही स्वाभाविक भी था।' आर्थिक दृष्टि से आज भी हमारे समाज की स्थिति असन्तोष जनक है। समाज में स्पष्टतः दो वर्ग दिखाई देते है अति सम्पन्न तथा अति निर्धन। कुछ मध्यम वर्ग के भी हैं परन्तु बड़ा भाग अति निर्धन लोगों का है जिन्हें हम श्रमजीवी भी कह सकते हैं। ये श्रमिक अपने श्रम से उच्चवर्ग के लिए समस्त सुख साधन उपलब्ध कराते हैं, यही उनके जीवन की नियति है। अर्थ के इस विषम विभाजन की ओर संकेत करते हुए महादेवी जी ने लिखा है– 'इस विषम मानव समष्टि में सौ में चौरानवे मनुष्य तो जड़ और निर्धन श्रमजीवी हैं जिनकी स्थिति का एक मात्र उपयोग शेष छः के लिए सुविधाएँ जुटाना है, और शेष छः में अकर्मण्य धनजीवी, उच्च बुद्धिजीवी, निम्न बुद्धिजीवी श्रमिक आदि इस प्रकार एकत्र है कि एक की विकृति से दूसरा गलत हो जाता है।'

समाज का एक वर्ग अधिकाधिक धनी एवं समृद्ध हो रहा है, इसे सामाजिक प्रवृत्ति एवं समृद्धि का सूचक मान लिया जाता है, परन्तु महादेवी जी इस बात से सहमत नहीं है। क्योंकि वे कुछ धनजीवियों को सम्पूर्ण जाति नहीं मानती और न ही उनमें स्वस्थ जाति के गुण और विशेषताओं को खोजा जा सकता है उनकी दृष्टि में ये समाज के लिए उस रोग के समान है जो जितना अधिक स्थान घेरता है उतना ही अधिक स्वास्थ्य का अभाव प्रकट करता है। उनकी दृष्टि में 'यो धनजीवी समाज के लिए तो अस्वास्थ्य के सूचक है ही, स्वयं अपने आपके लिए भी किसी स्वस्थ स्थिति का द्योतक नहीं है, क्योंकि नितान्त बुद्धिजीवी वर्ग जैसे एक ओर उच्च बनने की आकांक्षा और दूसरी ओर अभाव की शिलाओं से दब कर दूर जाता है उसी प्रकार सर्वथा समृद्ध भी उच्चता जनित गद्य और सुविधाओं के दृढ़ साँचे में पथराता रहता है।'

समाज के दूसरे वर्ग अर्थात् श्रम जीवियों की स्थिति अर्थ के विषय विभाजन के कारण दयनीय हो गई है। उनके जीवन की सरसता जैसे नष्ट होकर रह गई है। एक मशीन की तरह निरन्तर काम करते करते सम्भवतः वह स्वयं भी यह भूल गया है कि वह भी जीवित प्राणी है, रोटी के अतिरिक्त अन्य सुख सुविधाएँ भी जीवन के लिए आवश्यक हैं, वह जैसे इस तथ्य से अपरिचित है। वे यह मानती है कि हमारे श्रम जीवियों का जीवन सौंदर्य ही मानो नष्ट हो गया है। इतना होने पर भी वे यह मनती है कि सामान्य मानवता अभी श्रमजीवियों में ही शेष है, सांस्कृतिक मूल्यों की दृष्टि से यह वर्ग अभी भी श्रेष्ठ है संवेदना की दृष्टि से श्रमिक वर्ग अब भी अन्य 'वर्गों की

तुलना में आदरणीय है क्योंकि पतन के मार्ग पर धनिक तथा बुद्धिजीवी वर्ग उसके आगे है। उनके अनुसार – 'इस मानव समष्टिम ज्ञान के अभाव के रूढ़ियों को अतल गहराई दे दी है, यह मिथ्या नहीं है और अर्थ वैषम्य ने इसकी दयनीयता को असीम बना डाला है, यह सत्य है, परन्तु सब कुछ कह सुन चुकने पर इतना तो स्वीकार करना ही होगा कि श्रम का यह उपासक, केवल बुद्धि व्यापारी से अधिक स्वाभाविक मनुष्य भी है और जातीय गुणों का उससे अधिक विश्वसनीय रक्षक भी.... जीवन के संघर्ष में ठहरने की जितनी अधिक क्षमता वह रखता है, उतनी किसी बुद्धिवादी में सम्भव नहीं।'

स्त्री के जीवन में भी अर्थ विभाजन का पर्याप्त प्रभाव देखा जा सकता है। महादेवी जी के अनुसार अर्थ का विषम विभाजन एक ऐसा बन्धन है जो स्त्री और पुरुष दोनों को समान रूप से प्रभावित करता है। वे स्वीकार करती है कि स्त्री जीवन की अनेक विवशताओं में प्रधान और उसे सबसे अधिक जड़ बनाने वाली विवशता अर्थ से ही सम्बन्धित है। उनके विचार से – 'समाज ने स्त्री के सम्बन्ध में अर्थ का ऐसा विषम विभाजन किया है कि साधारण श्रमजीवी वर्ग से लेकर सम्पन्न वर्ग की स्त्रियों तक की स्थिति दयनीय ही कही जाने योग्य है। 'आज पहले जैसी स्थिति नहीं रही है, स्त्रियाँ भी अधिक दृष्टि से पर्याप्त स्वतन्त्रता प्राप्त करती जा रही है– 'आधुनिक परिस्थितियों में स्त्री की जीवनधारा, को जिस दिशा को अपना लक्ष्य बनाया है, उनमें पूर्व आर्थिक स्वतन्त्रता ही सबसे अधिक गहरे रंगों में चित्रित है।'

महादेवी जी ने पर्याप्त उदारता पूर्वक आज की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण किया है जिससे उनके प्रगतिशील दृष्टिकोण का परिचय मिलता है। यद्यपि उन्होंने मार्क्सवाद में अपना आत्म विश्वास नहीं व्यक्त किया है परन्तु इतना वे अवश्य स्वीकार करती है कि वर्ग भेद मानवता के लिए अभिशाप है। वर्ग भेद के कारण मानवता नष्ट हो रही है धन की अधिकाधिक चाह ने संवेदना जैसे गुणों को अर्थ का विषम विभाजन कभी भी समाज को प्रगति पथ पर नहीं ले जा सकता।

बौद्धिकता एवं बुद्धिजीवी वर्ग :-

जैसा कि समाज की स्थिति से ही स्पष्ट है कि आज की शिक्षा के परिणाम स्वरूप हमारी चेतना का एकांगी विकास हो रहा है। विज्ञान और बौद्धिकता का प्राधान्य हो गया है, जिसके कारण भावनाओं का दायरा संकीर्ण होता जा रहा है, मस्तिष्क केवल कल्पना या भावना के सहारे जीवित रहना नहीं चाहता, क्योंकि विज्ञान ने वस्तुपरक दृष्टिकोण उपस्थित कर के कल्पना हिंडोले की गति धीमी कर दी है। महादेवी जी के शब्दों में – 'विज्ञान के चरम विकास ने हमारी आधुनिकता को एकांगी बुद्धिवाद में इस तरह सीमित किया है कि आज जीवन के किसी भी आदर्श को उसके निरपेक्ष सत्य के लिए स्वीकार

करना कठिन है। परिणामतः एक निस्सार बौद्धिक उलझन भी हमारे हृदय की सम्पूर्ण सरल भावनाओं से अधिक सारवती जान पड़े तो आश्चर्य ही क्या है।'

महादेवी जी के विचार से इस शुष्क बौद्धिकता के परिणाम स्वरूप वैयक्तिकता भी बढ़ गई है– 'एक दीर्घकाल से हमारा बुद्धिजीवी वर्ग जीवन के स्वाभविक और सजीव स्पर्श से दूर रहने का अभ्यस्त हो चुका है। परिणामतः एक ओर मस्तिष्क विचारों की व्यायामशाला बन जाता है और दूसरी ओर हृदय निर्जीव चित्रों का संग्रहालय मात्र रह जाता है।' अपने देश के बुद्धिजीवियों को वे मानसिक रूप से गुलाम तथा हीन भावना से युक्त मानती है क्योंकि उनके मस्तिष्क पर पश्चिम के विचारों का पूर्ण प्रभाव है। वे न तो अपनी दृष्टि का प्रयोग करते हैं न बुद्धि का। ऐसा लगता है मानों पाश्चात्य बौद्धिकता को ही हम श्रेष्ठ समझते हैं अपनी संस्कृति तथा अपने विचारों को प्रस्तुत करने में हीन भावना का अनुभव होता है। इसी मनोवृत्ति की ओर संकते करते हुए वे लिखती हैं – 'उनका पंगु से प्रमुख स्वप्न भी विदेशीय पंख लगा लेने पर स्वर्ग से विरुद्ध आदर्श भी पश्चिमीय साँचे में ढल कर सुन्दरतम के अतिरिक्त और कोई संज्ञा नहीं पाता। उसका मूल्यहीन से मूल्यहीन दूसरी संस्कृति की छाया का स्पर्श करते ही पारसों का शिरोमणी कहलाने लगता है। उनका दरिद्र से दरिद्र विचार भी देशी परिधान में विदेशी पेबन्द लगा कर समस्त विचार जगत का एक छत्र सम्राट स्वीकार कर लिया जाता है।'

इस मानसिक दासता के कारण हम अपनी समृद्ध परम्पराओं को भूलते जा रहे हैं हम दम्भ को अधिक महत्व दे रहे हैं, विवेक को कम। धीरे–धीरे स्वार्थप्रिय होते जा रहे हैं और हृदय हीनता हमारा स्वभाव बनती जा रही है। महादेवी जी के अनुसार बौद्धिकता का ये सिद्धांत का जब तक व्यवहार के साथ सामंजस्य नहीं होगा– तब तक हमारे जीवन का बहुमुखी विकास नहीं हो सकेगा। उनके अनुसार – 'विकास की पहली आवश्यकता है कि हमारे बौद्धिक ऐश्वर्य, और मानसिक वैभव जीवन का अक्षय वरदान है, परन्तु जब हम इसे व्यक्त जगत कि विषमताओं के समर्थन के लिए खड़ा करने लगते हैं, तब तक यह हमारी असंख्य त्रुटियों और दुर्बलताओं का सफल वकील बन कर भी रह जाता है।'

इस प्रकार महादेवी जी ने समाज, धर्म, राजनीति, तथा शिक्षा आदि विषयो से समन्बिधत समस्याओं को प्रस्तुत करते हुए उनके समाधान तथा निदान का भी मार्ग पूर्ण आत्म विश्वास के साथ प्रस्तुत किया है। वे न तो मध्यकालीन विचारों से पूर्णतया प्रभावित है, न ही आधुनिक युग से असपुक्त। उन्होंने अत्यधिक संतुलित एवं सूक्ष्म दृष्टि से आज की स्थिति का विवेचन किया है उनकी दृष्टि आज के साथ साथ भविष्य के प्रति भी सतर्क है। वे उन त्रुटियों की ओर संकेत करती चलती है जो वर्तमान में तो

अनुपयोगी है ही, भविष्य में घातक भी सिद्ध हो सकती है। वे अपनी संस्कृति के पतन से अत्यधिक दुःखी है और मानती हैं कि बुद्धि जीवियों में जो विदेशी चिन्तन विदेशी संस्कृति के प्रति अन्ध मोड़ उत्पन्न हो रहा है, वह रोका जाए। व्यवहार और सिद्धांत में एक रसता उत्पन्न की जाए।[33]

संदर्भ सूची

1. पुस्तक : हिन्दी साहित्य कोश (भाग 1) पारिभाषिक शब्दावली, सम्पादक : धीरेन्द्र वर्मा, प्रकाशक : ज्ञान मण्डल लिमिटेड, वाराणसी, पृष्ठ 863
2. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में यथार्थबोध और गाँधी–दर्शन, डॉ. केशव कुमार शर्मा, अमर प्रकाशन, सदर बाजार, मथुरा पृष्ठ 111 से 113
3. जीवन–झाँकी, गंगाप्रसाद, महादेवी संस्मरण ग्रंथ, संपादक सुमित्रानंदन पंत, शांतिजोशी, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ 29
4. जीवन–झाँकी, गंगाप्रसाद, महादेवी संस्मरण ग्रंथ, संपादक सुमित्रानंदन पंत, शांतिजोशी, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पृष्ठ 13
5. जीवन–झाँकी, गंगाप्रसाद, महादेवी संस्मरण ग्रंथ, संपादक सुमित्रानंदन पंत, शांतिजोशी, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 14
6. श्रीमती महादेवी वर्मा एक रेखाचित्र, शिवचन्द्रनागर, पुस्तक : महादेवी वर्मा काव्य–कला और जीवन–दर्शन, सम्पादिक शचीरानी गुर्टू , प्रकाशक : रामलालपुरी आत्माराम एण्ड सन्स, वाराणसी पृष्ठ 29 से 30
7. प्रथम दर्शन और व्यक्तित्वबोध, गंगा प्रसाद पाण्डेय,परिचय इतना इतिहास यही (प्रथम खण्ड), प्रकाशक – भारती भण्डार, इलाहाबाद पृष्ठ 73
8. महादेवी का गद्य साहित्य : विश्लेषण और स्वरूप , डॉ. गोवर्द्धन सिंह (संस्करण प्रथम), अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर, कानपुर पृष्ठ 62
9. महादेवी की चित्रकला, डॉ. मीरा सक्सेना, पुस्तकः महादेवी का रचना संसार, संपादक : डॉ. एन. आर. परमार, प्रकाशक प्राचार्य, नलिन अरविन्द एण्ड टी.वी. पटेल आर्टस कालेज, वल्लभविद्यानगर, गुजरात पृ. 401
10. श्रीमती महादेवी वर्मा एक रेखाचित्र, शिवचन्द्रनागर, पुस्तक : महादेवी वर्मा काव्य–कला और जीवन–दर्शन, प्रकाशक : रामलालपुरी आत्माराम एण्ड सन्स, वाराणसी पृष्ठ 32
11. दीप बुझ गया शिखा अमर है – महादेवी विष्णुकान्त शास्त्री, पुस्तक : परिचय इतना इतिहास यही (प्रथम खण्ड) संपादक– डॉ. रामजी पाण्डेय, प्रकाशक : भारती भण्डार, इलाहाबाद पृष्ठ 186
12. रामभीनी तू सजनी, उषा सक्सेना, पुस्तक : महादेवी साहित्य का अभिनव मूल्यांकन असीम मधुपुरी, जनार्दन प्रकाशन, पृष्ठ 97
13. महादेवी की चित्रकला, डॉ. मीरा सक्सेना, पुस्तक : महादेवी का रचना संसार, संपादक : डॉ. एन. आर. परमार, प्रकाशक प्राचार्य, नलिन अरविन्द एण्ड टी.वी. पटेल आर्टस कालेज, वल्लभविद्यानगर, गुजरात पृष्ठ 284
14. महादेवी का गद्य साहित्य : विश्लेषण और स्वरूप, डॉ. गोवर्द्धन सिंह संस्करण, अनुभव प्रकाशन, पृष्ठ 144
15. महादेवी का गद्य साहित्य : विश्लेषण और स्वरूप, डॉ. गोवर्द्धन सिंह संस्करण, अनुभव प्रकाशन, पृष्ठ 36
16. अतीत के चलचित्र, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृष्ठ 30
17. अतीत के चलचित्र, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद पृष्ठ 27
18. महादेवी के रेखाचित्र, डॉ. कृष्णचन्द्र वर्मा, महादेवी साहित्य का अभिनव मूल्यांकन असीम मधुपुरी, जनार्दन प्रकाशन पृष्ठ 206
19. छायावादी कवियों के गद्य–साहित्य में समाजवादी चेतना, प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा के विशेष संदर्भ में शोधकर्ता कुलदीप कौर, पृष्ठ 270–272
20. साहित्यकार महादेवी, डॉ. श्रीमती हर्षनन्दिनी भाटिया,श्रीमती विभाजैन कन्दर्प प्रकाशन पृष्ठ 11
21. मेरी साहित्य–यात्रा : गद्य–लेखन के संदर्भ में, महादेवी वर्मा, पत्रिका : मैत्रेय कलश त्रैमासिक पत्रिका, सितम्बर 1988 महादेवी विशेषांक, संपादक प्रद्युम्न नाथ तिवारी 'करुणेश' पृष्ठ 62
22. महादेवी का गद्य साहित्य : विश्लेषण और स्वरूप , डॉ. गोवर्द्धन सिंह संस्करण, अनुभव प्रकाशन, पृष्ठ 25
23. महादेवी वर्मा के स्मृति चित्र में पशु–पक्षी प्रेम, प्रो. गिरीश चौधरी, प्रो. पद्मा सी. पटेल, पुस्तक : महादेवी का रचना संसार, संपादक : डॉ. एन. आर. परमार, प्रकाशक प्राचार्य, नलिन अरविन्द एण्ड टी.वी. पटेल आर्टस कालेज, वल्लभविद्यानगर, गुजरात पृष्ठ 369–370
24. महादेवी वर्मा के स्मृति चित्र में पशु–पक्षी प्रेम, प्रो. गिरीश चौधरी, प्रो. पद्मा सी. पटेल, पुस्तक : महादेवी का रचना

संसार, संपादक : डॉ. एन. आर. परमार, प्रकाशक प्राचार्य, नलिन अरविन्द एण्ड टी.वी. पटेल आर्टस कालेज, वल्लभविद्यानगर, गुजरात पृष्ठ 368
25. महादेवी का गद्य साहित्य : विश्लेषण और स्वरूप , डॉ. गोवर्द्धन सिंह, अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर, कानपुर पृष्ठ 26
26. मेरा परिवार, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद पृष्ठ 46
27. महादेवी वर्मा के स्मृति चित्र में पशु–पक्षी प्रेम, प्रो. गिरीश चौधरी, प्रो. पद्मा सी. पटेल, पुस्तक : महादेवी का रचना संसार, संपादक : डॉ. एन. आर. परमार, प्रकाशक प्राचार्य, नलिन अरविन्द एण्ड टी.वी. पटेल आर्टस कालेज, वल्लभविद्यानगर, गुजरात पृष्ठ 369
28. महादेवी का गद्य साहित्य : विश्लेषण और स्वरूप , डॉ. गोवर्द्धन सिंह संस्करण, अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर, कानपुर पृष्ठ 29
29. महादेवी और युगबोध, श्रीमती नीलम मुकेश, पुस्तक : महादेवी साहित्य का अभिनव मूल्यांकन, असीम मधुपुरी, पृष्ठ 174 से 182
30. महादेवी का गद्य साहित्य : विश्लेषण और स्वरूप, डॉ. गोवर्द्धन सिंह संस्करण, अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर, कानपुर पृष्ठ 155
31. महादेवी और युगबोध श्रीमती नीलम मुकेश, पुस्तक : महादेवी साहित्य का अभिनव मूल्यांकन, अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर, कानपुर पृष्ठ 180 से 182
32. महादेवी का गद्य साहित्य : विश्लेषण और स्वरूप, डॉ. गोवर्द्धन सिंह, अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर, कानपुर पृष्ठ 158
33. महादेवी और युगबोध श्रीमती नीलम मुकेश, पुस्तक : महादेवी साहित्य का अभिनव मूल्यांकन, असीम मधुपुरी, जनार्दन प्रकाशन, पृष्ठ 183